पशुधन ज्ञान

वर्ष : 2 | अंक : 1 | जनवरी 2016 | अर्धवार्षिक हिसार | शुल्क : 50/-

RNI Reg. No. HARHIN/2015/63352

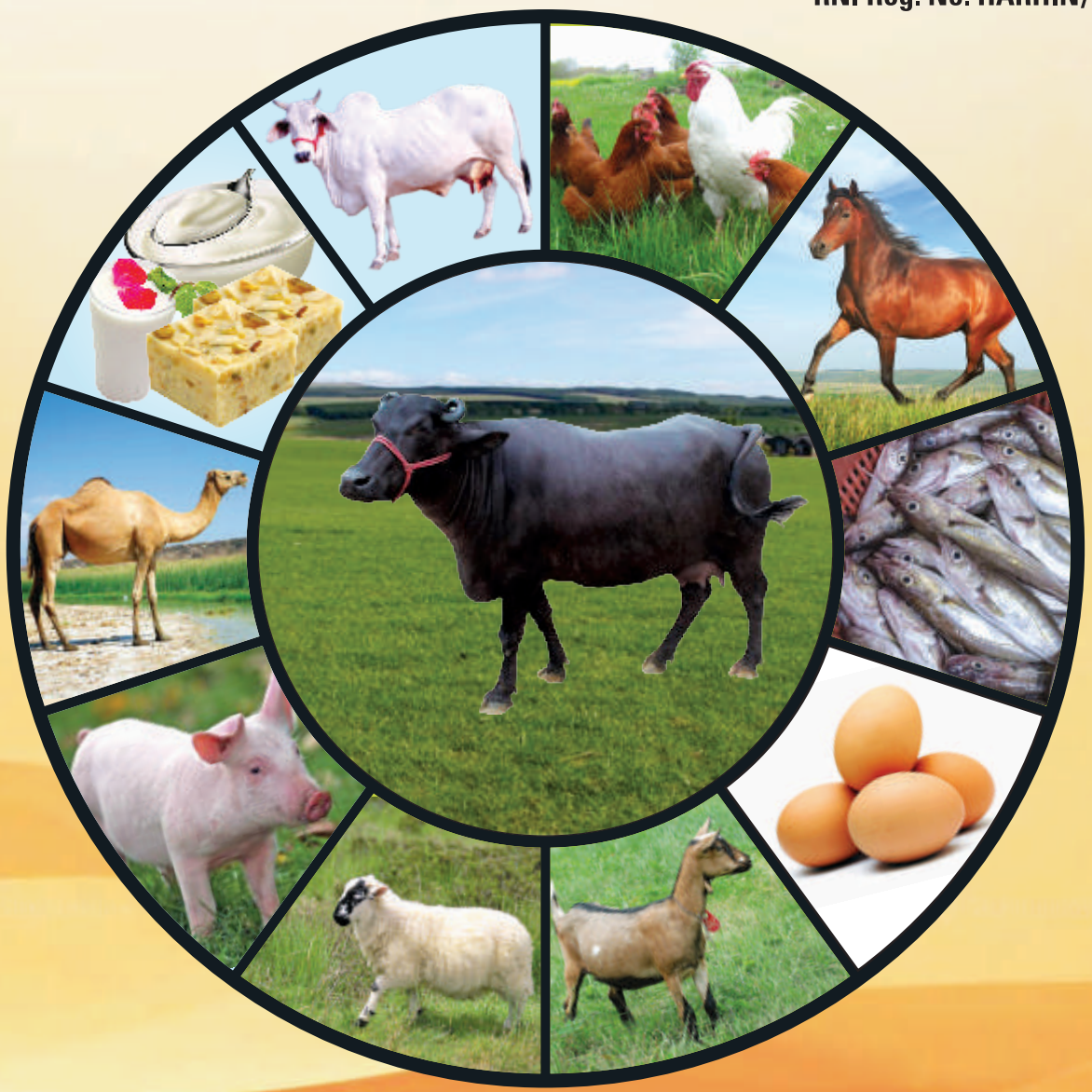

प्रकाशक

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार - 125004 (हरियाणा)

प्रकाशक
डॉ. सुधि रंजन गर्ग
निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार – 125 004 (हरियाणा)

सम्पादकीय दिशा निर्देशन
डॉ. सुधि रंजन गर्ग

सम्पादक
डॉ. देवेन्द्र सिंह

सम्पादकीय सहायक
संतोष शर्मा

टंकन सहायक
सूरज

मुद्रक
डोरा ऑफसेट प्रिन्टर्स
हिसार

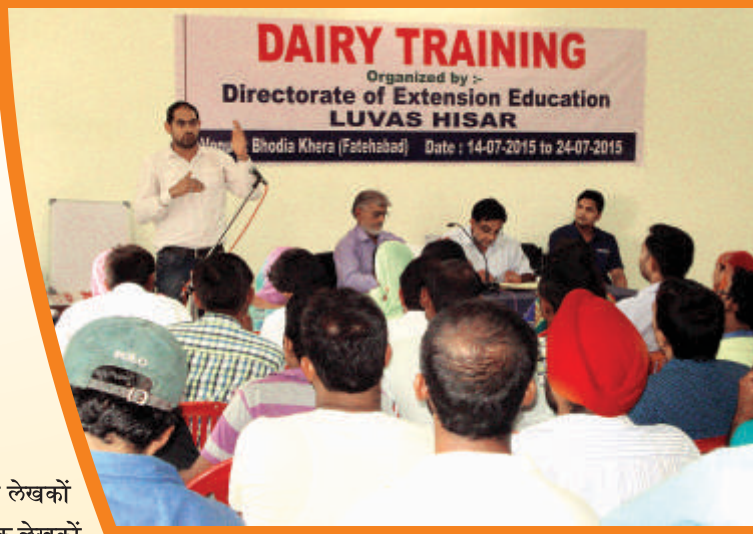

निर्देश :– इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है तथा लेखकों द्वारा पाठकों की जानकारी के लिए प्रस्तुत की गई है। सम्पादक, प्रकाशक तथा मुद्रक लेखकों के द्वारा दी गई जानकारी के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। ब्रांडेड दवाइयों व उत्पादों के नाम केवल उदाहरण के रुप में दिए गए हैं तथा इन्हें विश्वविद्यालय की ओर से सिफारिश न माना जाए। पाठकों को यह सलाह दी जाती है कि किसी भी जानकारी को प्रयोग में लाते समय विशेषज्ञों की सलाह लें। किसी भी त्रुटि के लिए सम्पादक से सम्पर्क किया जा सकता है। सभी विवादों का न्यायक्षेत्र हिसार न्यायालय होगा।

प्रकाशक डॉ. सुधि रंजन गर्ग, निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार ने डॉ. देवेन्द्र सिंह के सम्पादन में डोरा ऑफसेट प्रिन्टर्स, हिसार से लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के लिए मुद्रित करवाकर जनवरी, 2016 को प्रकाशित किया।

मेजर जनरल (डॉ.) श्रीकान्त
एस.एम., वी.एस.एम (सेवानिवृत्त)
कुलपति
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

हमारे देश की आर्थिक व्यवस्था मुख्यत: कृषि कार्यक्षेत्र पर आधारित है। पशुपालन कृषि का अभिन्न अंग है। पशुपालन के बिना देश की खाद्य व्यवस्था का प्रबन्धन बहुत कठिन है। सच तो यह है कि बढ़ती जनसंख्या के कारण कम होते कृषि क्षेत्र ने आज पशुपालन को अत्याधिक प्रगतिशील कार्य बना दिया है। पिछले कुछ दशकों में पशुपालन व्यवसाय में निरंतर वृद्धि देखने को मिली है। 19वीं अखिल भारतीय पशुधन-गणना के आंकड़ों के अनुसार सन् 2012 में भारत में पशुधन की संख्या 512 मिलियन थी। इसी के परिणाम स्वरूप हमारा देश विश्व में अधिकतम दुग्ध उत्पादक देश बना है। विश्व के कुल दूध उत्पादन के 13.1 प्रतिशत भाग का श्रेय हमारे देश को ही जाता है। परन्तु फिर भी भारत में प्रति व्यक्ति 252 ग्राम दूध ही उपलब्ध है, जो कि 265 ग्राम प्रति व्यक्ति विश्व की औसत से कम है।

बड़े हर्ष का विषय है कि हरियाणा प्रदेश में वर्ष 2014-15 में कुल 79 लाख टन दुग्ध उत्पादन हुआ जिस कारण हरियाणा के प्रति व्यक्ति को हर दिन 805 ग्राम दूध की उपलब्धता थी, जो विश्व की औसत से बहुत अधिक है। वर्ष 2015-16 में प्रदेश में दुग्ध उत्पादन और भी बढ़ कर 83 लाख टन हो गया है तथा अब हर दिन प्रति व्यक्ति 835 ग्राम दूध की उपलब्धता हो गई है। हरियाणा में इस प्रकार दुग्ध उत्पादन में एक वर्ष में 6 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि विश्व स्तर पर औसत वृद्धि केवल 3 प्रतिशत के लगभग आँकी गई है।

पशुजन्य खाद्य पदार्थों की आवश्यकता निरन्तर बढ़ रही है। वर्ष 2009-10 के आँकड़ों के अनुसार, हरियाणा में पशुधन क्षेत्र का उत्पादन लगभग 18,000 करोड़ रूपये था जो कि खेती-बाड़ी उद्योग के सकल उत्पाद 37,000 करोड़ रूपये का लगभग 50 प्रतिशत था। इस क्षेत्र में किसानों की अपार सफलता की संभावना को देखते हुए हमारे विश्वविद्यालय द्वारा पूरे प्रदेश के किसानों के ज्ञान व कौशल वर्धन के लिए बड़े पैमाने पर कार्य किया जा रहा है। विस्तार शिक्षा निदेशालय की इन कार्यों में विशेष भूमिका है।

विश्वविद्यालय के विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका वास्तव में वैज्ञानिकों के शोध, ज्ञान, विचार, परामर्श व अन्य लाभप्रद जानकारियों का विशाल स्रोत है। इस पत्रिका के नए अंक के प्रकाशन के अवसर पर विस्तार शिक्षा निदेशक, पत्रिका के सम्पादक व विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक बधाई के पात्र हैं। किसान वर्ग, पशुपालक व पशु उत्पादों से संबंधित व्यवसायिओं से मेरा निवेदन है कि वे पत्रिका में दी गई जानकारियों को स्वयं संचित कर अन्य जनमानस में भी बाँटे ताकि यह ज्ञान शिक्षित और अशिक्षित सभी को लाभान्वित कर हमारे उद्देश्य की पूर्ति करे।

श्रीकान्त

डॉ. सुधि रंजन गर्ग
निदेशक, विस्तार शिक्षा
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

पर्यावरण में निरन्तर हो रहे परिवर्तन और कम होती जा रही कृषि योग्य भूमि के कारण किसानों की आर्थिक स्थिति पर बड़ा ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। विषम परिस्थितियों में कृषि के साथ-साथ पशुपालन अपना कर किसान अधिक आय अर्जित कर सकते हैं व अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सकते हैं। ग्रामीण इलाकों में नकद लाभ और लगातार आय का पशुपालन से बढ़िया और कोई विकल्प नहीं है। आज के युग में कृषि के विविधिकरण का भी बहुत महत्त्व है। आवश्यकता है कि कृषि के साथ-साथ किसान भाई पशुपालन, मुर्गीपालन, मछली पालन व पशुओं से प्राप्त होने वाले अन्य खाद्य पदार्थो के उत्पादन को व्यावसायिक रूप से अपनाएँ।

हरियाणा प्रांत ने प्रारम्भ से ही पशुपालन क्षेत्र में बहुत उन्नति की है। परन्तु कई बार लाभदायक होते हुए भी पशुपालन विषय पर वैज्ञानिक जानकारी न होने के कारण पशुपालकों को पूरा आर्थिक लाभ नहीं मिल पाता। इसलिए कृषक वर्ग के लिए यह अति आवश्यक है कि उन्हें पशुपालन क्षेत्र में तकनीकी विकास की नवीनतम व लाभदायक जानकारी प्राप्त करवाई जाए। पशुपालकों के उत्थान में लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के वैज्ञानिकों का सराहनीय योगदान रहा है। जागरूक पशुपालक वैज्ञानिक विधियाँ अपनाकर आर्थिक रूप से लगातार सक्षम बन रहे हैं, परन्तु बहुत से पशुपालक ऐसे भी हैं जिन्हें इन आधुनिक वैज्ञानिक विधियों का ज्ञान नहीं है। ऐसे किसानों को यह समझना चाहिए कि उन्नत वैज्ञानिक प्रणालियों को अपनाए बिना केवल परम्परागत तरीकों से कोई भी व्यवसाय विकसित रूप प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि परिवर्तन प्रकृति का नियम है।

पशुपालन के क्षेत्र में उच्चतम कोटि के तकनीकी विकास की आवश्यकता को देखते हुए यह विश्वविद्यालय अत्याधुनिक प्रयोगशालाओं में पशुओं से जुड़ी विभिन्न समस्याओं पर अनुसंधान कर उनके निवारण में कार्यरत है। यहाँ देश-विदेश से उच्च शिक्षा प्राप्त वैज्ञानिक किसानों की उन्नति के लिए सराहनीय कार्य कर रहे हैं। विश्वविद्यालय के विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका के वर्ष 2016 का प्रथम अंक पाठकों को सौंपते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है, क्योंकि इसके द्वारा पशुपालन से सम्बंधित हर प्रकार का ज्ञान पशुपालकों के घर-घर पहुँचेगा।

कृषक भाईयो व बहनो से विनम्र निवेदन है कि वे इस पत्रिका से अर्जित ज्ञान को अपना कर अन्य पशुपालकों को भी बाँटें। मैं विश्वविद्यालय के सभी वैज्ञानिकों, सहयोगी अधिकारियों व सम्पादकीय टीम का धन्यवाद करते हुए आग्रह करता हूँ कि वे भविष्य में भी इस पत्रिका द्वारा पशुपालकों को लाभान्वित करने में सदैव तत्पर रहें।

सुधि रंजन गर्ग

सम्पादक की कलम से .....

किसान भाईयो, प्राचीन काल से ही मानवीय सभ्यता के विकास में पशुओं का बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। साल दर साल समय बदलता गया सभ्यता के विकास में शताब्दियों से निरंतर बदलाव होता गया। लकड़ी के घूमते चकरे ने बड़े भारी भरकम विमानों का रूप ले लिया फिर भी बैल गाड़ी, घोड़ा-घाड़ी और अन्य पशुओं का महत्त्व आज भी ज्यौं का त्यौं बना हुआ है। आधुनिकरण के वर्तमान युग में भी हम दूध-दही, मक्खन, पनीर, गोस्त, अण्डे व ऊन आदि भौतिक वस्तुओं के लिए पशुओं पर निर्भर हैं। वास्तव में वास्तविकता तो ये है कि हमारी खाद्य व्यवस्था ही न संभले यदि पशुपालन न किया जाए तो, क्योंकि बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण और भूमंडलीय जैसे अकाल, बाढ़ आदि में पशुधन ही आर्थिक संकट से निपटने का सस्ता और सरल साधन है। कृषि के साथ आसानी से होने के कारण इस पर खर्चा भी कम होता है। वैसे भी बढ़ती जनसंख्या के साथ हमारी जमीन बढ़ने वाली है नहीं। पीढ़ी दर पीढ़ी परिवारों में सदस्य तो बढ़ते है पर किसान के पास उनको बाँटने के लिए प्रर्याप्त भूमि सम्पदा नहीं होती। कम कृषि भूमि में कृषि के साथ पशुपालन ही किसानों का एक अच्छा सहारा बन सकता है, जिससे वह घर की आर्थिक जरूरते पूरी कर सकता है।

मनुष्य पृथ्वी पर सबसे बुद्धिमान प्राणी है, यदि मानव जाति पशुपालन से लाभ कमाने के लिए अपनी बुद्धि और विवेक से काम लेकर प्राचीन रूढ़िवादी तरिकों से हटकर नये वैज्ञानिक तरिकों से पशुपालन करें तो भाईयो, इसमें कोई शक नहीं कि वह पशुपालन में भी पैसा और नाम दोनों प्राप्त कर सकता है। हमारे विश्वविद्यालय द्वारा लगाए गए समय-समय पर मेलों और प्रदर्शनियों में उन्नत पशुपालकों को सम्मानित भी किया गया है। अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में उनका नाम भी हुआ है। हमारी इस पशुधन ज्ञान पत्रिका में भी हमने सफलता की कहानी के नाम से नया कॉलम शुरू किया है, जिसमें पशुपालन क्षेत्र में उन्नत पशुपालकों की कहानी प्रस्तुत की गई है। हमारी पहली सफलता की कहानी की शुरूआत हमने पहली महिला पशुपालक बहन 'राजबाला' से की है, क्योंकि पशुपालन के क्षेत्र में महिलाओं का योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकता। हमारी महिला बहनें पशुधन की सेवा बड़े ही सेवा भाव से करती है।

भारत में पशुपालन से संबंधित बहुत से विश्वविद्यालय है, जिनमें लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार भी बहुत विख्यात है। इस विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने पशुपालन से संबंधित अनेकों शोध कार्य किए है, जो पशु प्रजनन, पशु नस्ल सुधार, पशु आवास, पशु आहार व घातक बीमारियों के निवारण से जुड़े हुए हैं। इन शोध कार्यों के द्वारा जन कल्याण की भावना को बढ़ावा देना ही इनका मुख्य उद्देश्य है।

हमारे विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों की वैज्ञानिक सोच केवल हम तक न रहें इस उद्देश्य को सम्मुख रख इस सोच और नई तकनीक को घर-घर पहुँचाने के लिए इस ज्ञान को पशुधन-पत्रिका के रूप में संचित कर दिया है। आपकों यह जानकर भी खुशी होगी कि इस संचित ज्ञान को पशुधन-पत्रिका के प्रथम अंक के रूप में किसानों के पठन-पाठन लायक बना कर प्रस्तुत किया जा रहा है। इस पत्रिका में पशु नस्लों की जानकारी, नस्ल सुधार, पशु आवास प्रबंधन, पशु आहार प्रबंधन, विभिन्न मौसमों में पशुओं की देखभाल, घातक बीमारियों से बचाव, टीकाकरण, गर्भकाल में पशुओं की देखभाल, जीवाणु-वीषाणु जनित रोग, दुग्ध और माँस उत्पादन, सफल पशुपालक की कहानी आदि विषयों पर जानकारी आप को मिलेगी। यह पत्रिका आपके लिए बहुत ही ज्ञानवर्धक व उपयोगी सिद्ध होगी। मेरा पशुपालकों से निवेदन है कि पत्रिका में बताई गई दवाइयों को चिकित्सक की सलाह लेकर ही पशुओं को दीजिए।

अन्ततः मुझे आशा है कि यह पत्रिका किसानों, पशुपालकों व पशुपालन से जुड़े व्यावसायिक समुदाय के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध होगी। मैं इस पत्रिका के वर्ष 2016 प्रथम अंक के सफल प्रकाशन के लिए कुलपति लुवास, विस्तार शिक्षा निदेशक, वैज्ञानिकगण और संपादकीय मंडल का बहुत-बहुत आभार प्रकट करता हूँ।

देवेन्द्र सिंह

विषय सूची

क्र.सं.	विषय		पृष्ठांक
1.	डेयरी फार्मिंग एवं स्वरोजगार	रेखा दहिया एवं कृष्ण कुमार यादव	1
2.	पशु उत्पादन एवं प्रबन्धन के मुख्य बिंदु	विशाल शर्मा, दिपिन चन्द्र यादव एवं देवेन्द्र सिंह बिढाण	4
3.	पशु प्रजनन में अपनाएँ आधुनिक तकनीक	राजेन्द्र सिंह	7
4.	पशुपालन में वर्षभर के कार्यो की सारणी	दिपिन चन्द्र यादव, देवेन्द्र सिंह बिढाण एवं विशाल शर्मा	10
5.	दूध एक सम्पूर्ण प्राकृतिक आहार	सज्जन सिंह एवं दलजीत सिंह	13
6.	दुधारू पशुओं का गर्मियों में उचित रख-रखाव	सज्जन सिंह, दलजीत सिंह एवं रेखा दहिया	15
7.	गाय भैंस के पेट की संरचना व पाचन प्रणाली	ज्योत्सना मदान एवं मीनाक्षी गुप्ता	18
8.	संतुलित पशु आहार	सुभाशीष साहू, देवेन्द्र सिंह बिढाण एवं सुरेश कुमार छिकारा	20
9.	पशु आहार में खनिज व विटामिन का महत्त्व	सुभाशीष साहू, हरीश कुमार गुलाटी एवं देवेन्द्र सिंह बिढाण	23
10.	पशुओं में अनाप्लाजमोसिस रोग	गौरी चंद्रात्रे एवं के.के. जाखड़	25
11.	नवजात पशुओं में दस्तों की समस्या-निदान एवं बचाव	साक्षी चौहान, विपुल ठाकुर एवं धर्मवीर सिंह दहिया	26
12.	पशुओं में गलघोटू : एक जानलेवा छूत रोग	राजेश सिंगाठिया एवं सुनील कुमार तमोली	29
13.	पशुओं में क्षय रोग- ट्यूबरकुलोसिस	विपुल ठाकुर, साक्षी चौहान एवं धर्मवीर सिंह दहिया	31
14.	पशुओं में मुख्य खाद्यजन्य विषाक्तता तथा बचाव के उपाय	ओ.पी. महला एवं वन्दना भनोट	34
15.	सूकर पालन देखभाल एवं प्रबन्धन	सुभाशीष साहू, विशाल शर्मा देवेन्द्र सिंह बिढाण	36
16.	सूकर ज्वर	प्रवीन कुमार, रेखा यादव एवं नरेश कुमार	38
17.	बकरियों में विषाणु जनित रोग	राजेश सिंगाठिया एवं सुनील कुमार तमोली	39
18.	पागल कुत्ते द्वारा काटने पर रेबीज़ से बचाव	सुधि रंजन गर्ग	42
19.	घोड़ों में पेट दर्द : एक घातक रोग	दिनेश गुलिया, राजेन्द्र यादव एवं अशोक कुमार	44
20.	लैंप-पशुओं की बीमारी पहचानने के लिए एक कारगर तकनीक	अनुज तिवारी, सुशीला मान एवं कनिष्ठ बतरा	47
21.	अल्ट्रासोनोग्राफी का प्रजनन प्रणाली के मूल्यांकन में योगदान	ज्ञान सिंह, रमेश कुमार चंदोलिया एवं आनन्द कुमार पाण्डेय	48
22.	एक पशुपालक महिला की सफलता की कहानी	संतोष शर्मा	50
23.	किसान चालीसा	संतोष शर्मा	52

डेयरी फार्मिंग एवं स्वरोजगार

रेखा दहिया एवं कृष्ण कुमार यादव
पशु विज्ञान केन्द्र, गुड़गाँव
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

डेयरी फार्मिंग छोटे, मध्यम वर्गीय, भूमिहीन किसानों तथा कृषि मजदूरों के लिए रोजगार एवं आय का महत्त्वपूर्ण साधन है। डेयरी फार्मिंग दूध व्यवसाय के साथ-साथ खेतों के लिए खाद और भूमि की उपजाऊपन को बढ़ाता है।

भारत का पशुधन विश्व में सबसे ज्यादा है। भारत का दूध उत्पादन 141000 लाख टन है जो कि 2020 में 180000 लाख टन हो जाएगा। हरियाणा का वार्षिक दूध उत्पादन 79.01 लाख टन है तथा प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता 805 ग्राम हो गई है। दूध व्यवसाय सबसे प्राचीन उद्योग है। आजकल डेयरी उद्योग/डेयरी फार्मिंग विश्व का सबसे आकर्षक क्षेत्र है, क्योंकि दूध व दूध उत्पादों की मांग कभी कम नहीं होती और शाकाहारी व माँसाहारी सभी लोग दूध पीते हैं।

डेयरी फार्म खोलने के लिए खर्च मुख्यत: पशुओं की खरीद, छप्पर तथा कुछ यंत्रों पर आता है। डेयरी फार्मिंग के लिए भूमि, पानी, वाहन, बिजली, डीज़ल ईंधन, गोदाम तथा दूध संसाधन के लिए सरकार से लोन की सुविधा भी दी जाती है। बड़ी ईकाई स्थापित करने के लिए राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण बैंक से भी परामर्श कर अपना रोजगार आरम्भ कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त पशुपालन विभाग, डेयरी सहकारिता विभाग, उन्नत डेयरी फार्म तथा विश्वविद्यालय के डेयरी विभाग के अधिकारी भी डेयरी ईकाई बनाने में सहायता करते हैं। डेयरी फार्म ईकाई स्थापित करने के लिए डेयरी फार्मिंग प्रशिक्षण का होना बहुत जरूरी है। इसके अतिरिक्त पशु चिकित्सालय तथा कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा भी सुनिश्चित होनी चाहिए।

डेयरी फार्मिंग की विशेषताएँ एवं लाभ

लगभग सभी उन्नत देशों में 90 प्रतिशत दूध का उत्पादन डेयरी फार्मिंग द्वारा किया जाता है। डेयरी फार्मिंग की मुख्य विशेषताएँ और लाभ इस प्रकार है :

1. साफ एवं स्वच्छ दूध उत्पादन।
2. कृषि आय, प्रति गाय दूध उत्पादन तथा प्रति एकड़ उपज में बढोत्तरी।
3. जमीन का अधिकतर उपयोग चारे और पशुपालन के लिए।
4. 30 प्रतिशत पानी की बचत।
5. समय निर्धारित कृषि कार्यों का संचालन व उत्पादन में बढ़ोत्तरी।
6. भूमि जाँच द्वारा खादों का कम मात्रा में उपयोग व देसी खाद का प्रयोग।
7. मजदूर क्षमता को बेहतर बनाना।
8. उन्नत कुशल क्षमता को बहु खंड श्रमशक्ति बनाना।
9. पशुओं का सही चयन, रख-रखाव, संतुलित पशु आहार, पशुओं में कम तनाव आदि।
10. अच्छी गुणवत्ता और पोषक तत्त्वों से भरपूर चारे की उपलब्धता।
11. भूमि का सरंक्षण एवं हवा और पानी का प्रदूषण से बचाव।
12. केंचुएं द्वारा खाद् का उत्पादन भी डेयरी फार्मिंग के साथ-साथ आय का एक और मुख्य स्त्रोत बन सकता है।

डेयरी फार्म/इकाई के लिए पशुओं की मुख्य नस्लें

1. विदेशी नस्लें/संकर नस्लें

जर्सी- यह नस्ल हल्के पीले से हल्के भूरे रंग की होती है। यह नस्ल 5000 किलोग्राम तक दूध का उत्पादन एक ब्यांत में करती हैं।

हॉल्स्टीन फ्रीजन- यह नस्ल सबसे ज्यादा दूध देने वाली नस्ल है। इस का रंग काला-सफेद या लाल, सफेद होता है। इस नस्ल का दूध उत्पादन 6000 किलोग्राम प्रति ब्यांत होता है।

2. स्वदेशी नस्लें

साहीवाल- यह नस्ल भारत के पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश में पाई जाती है। नस्ल का दूध उत्पादन 4000 किलोग्राम है।

लाल सिंधी- यह गाय असम, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, छत्तीसगढ़ में पाई जाती है। यह गाय 3000 किलोग्राम दूध का उत्पादन करती हैं।

इसके अतिरिक्त गिर, थारपारकर, हरियाणा गाय की नस्लें भी 1500-2000 किलोग्राम दूध का उत्पादन करती हैं।

3. मुर्राह तथा नीली रावी भैंस

ये नस्लें डेयरी इकाई स्थापित करने के लिए उपयुक्त है। इस नस्ल का दूध उत्पादन लगभग 2000-4000 किलोग्राम है।

डेयरी फार्मिंग के लिए पशुपालन एवं डेयरी विभाग की नीतियाँ

क) **गौ संरक्षण एवं गौ संवर्धन**- हरियाणा राज्य में गौ संरक्षण एवं गौ संवर्धन नीति के तहत किसानों में गौवंश के प्रति अधिक रूचि पैदा करने के लिए तथा देसी गाय नस्लों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए यदि डेयरी इकाई/फार्मिंग स्थापित की जाती है तो 50 प्रतिशत अनुदान राशि का प्रावधान है, तथा दुधारू पशुओं जैसे भैंस की डेयरी इकाई के लिए 25 प्रतिशत अनुदान राशि का प्रावधान है। अनुसूचित जाति के पशुपालक यदि डेयरी फार्मिंग द्वारा स्वरोजगार अपनाना चाहते हैं तो 3 दुधारू पशुओं की डेरी इकाई के लिए 50 प्रतिशत अनुदान राशि उपलब्ध होती है ताकि वे अपनी आर्थिक स्थिति को सुधार कर सुदृढ़ बना सकें।

इस के अतिरिक्त अधिक दूध देने वाली साहीवाल व हरियाणा नस्ल की गायों के परिरक्षण व उत्पादन के लिए दूध उत्पादन के आधार पर 10,000 से 20,000 रुपये तक वार्षिक प्रोत्साहन राशि भी दी जाती है और किसान भाई इसका काफी लाभ उठा रहे हैं।

ख) **एकीकृत मुर्राह विकास योजना**- इस योजना के तहत मुर्राह नस्ल की भैंस जो 15 किलोग्राम व इससे अधिक दूध देती हैं, उन्हें 15000 से 30000 रुपये तक की वार्षिक प्रोत्साहन राशि दी जाती है। मुर्राह नस्ल की भैंसों के कटड़े भी पशुपालन विभाग द्वारा अच्छे मूल्य पर खरीदे जाते हैं।

ग) **बीमा योजना**- पशुपालक अपने पशुओं जैसे गाय, भैंस का बीमा मात्र रू0 100 में करवा सकते हैं। अनुसूचित जाति के पशुपालकों के लिए यह बीमा सभी पशुओं के लिए मुफ्त किया जाता है। फरीदाबाद, पलवल एवं मेवात में एक सर्वेक्षण के अनुसार, यह पाया गया कि डेयरी फार्मिंग एवं डेयरी प्रशिक्षण ईकाईयाँ स्वरोजगार के रूप में अधिक स्थापित हो रही हैं, यदि बेरोजगार युवक भूमिहीन किसान, छोटे व मध्य वर्गीय किसान पाँच दुधारू पशुओं जैसे- हॉल्स्टीन फ्रीजन, जर्सी, साहीवाल, नीली रावी की ईकाई स्थापित करता है, तो वह पशुओं, वाहन, बिजली, चारा, मजदूरी, चिकित्सा, रख-रखा पर आने वाले खर्च को निकालकर एवं केवल दूध बेच कर 40 से 50 हजार रूपये प्रतिमाह कमा सकते हैं और यदि दूध से विभिन्न उत्पाद बनाये जायें तो आय में और बढ़ोत्तरी की जा सकती है। इस के साथ-साथ दो साल बाद पशुओं की संख्या भी दो गुनी हो जाती है। देसी गाय के दूध में ए-1, ए-2 प्रोटीन उत्तम मात्रा में पाया जाता है जो प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। देसी गाय का दूध दिल्ली व नोयडा में 150 रूपये प्रति लीटर से बिक रहा है। एक नौकरी पर जाने वाला युवक सुबह 10 बजे से सायं 5 बजे तक काम करता है, परन्तु डेरी ईकाई/फार्मिंग (20 से अधिक पशुओं) को स्वरोजगार रूप में अपना कर वह 5 से 6 लाख कमा सकता है, कोई समय की पाबन्दी नहीं, उम्र की सीमा नहीं तथा सभी बैंक डेयरी फार्मिंग के लिए लोन की सुविधा देते हैं।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

e-पशुपालन

पशु पालन सम्बन्धित सम्पूर्ण जानकारी पाएँ अपने मोबाईल में

ई-पशुपालन एप्प द्वारा

जानकारी हेतु सम्पर्क करें : 01662-289599

पशु उत्पादन एवं प्रबन्धन के मुख्य बिंदु

विशाल शर्मा, दिपिन चन्द्र यादव एवं देवेन्द्र सिंह बिढाण

पशु उत्पादन एवं प्रबन्धन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

ग्रामीण क्षेत्र में समृद्धि एवं विकास में पशुधन की अहम् भूमिका है। पशुपालन व्यवसाय को अधिक लाभकारी बनाने हेतू पशु प्रजनन, संतुलित पशु आहार, आवास प्रबंधन आदि की जानकारी होना बहुत उपयोगी है। डेयरी उद्योग की सफलता के लिए पशु की अच्छी नस्ल का होना बहुत आवश्यक है। परन्तु संतुलित व अच्छे आहार के लिए उचित प्रबंधन का होना भी अति आवश्यक है। उत्तम पशु प्रबंधन हेतु निम्न बिंदु महत्त्वपूर्ण हैं –

1. पशु प्रजनन

नस्ल सुधार के लिए अच्छी नस्ल की गाय/भैंस का चुनाव करके उसे अच्छे सांड/झोटे से गर्भाधान करवाना चाहिए। कृत्रिम गर्भाधान द्वारा प्रजनन कराकर भी उत्पादन में बढ़ोत्तरी लायी जा सकती है। गाय/भैंस 21 दिन के अंतराल पर गर्मी में आती है। मदकाल के लक्षण दिखने पर 8–10 घण्टें बाद गर्भाधान करवाना चाहिए। पशु प्रजनन संबंधी महत्त्वपूर्ण बिंदु निम्नलिखित हैं –

- यह सुनिश्चित करें कि मादा पशु कब, कैसे और कितने समय तक गर्मी (मदकाल) में आती है।
- कृत्रिम गर्भाधान ठीक विधि से करवाना चाहिए।
- पशुओं के प्रजनन का लेखा–जोखा करना चाहिए जिससे गर्मी की तिथि के विषय में अनुमान लगाया जा सकें।
- यदि प्रजनन अंग से कोई असाधारण, गन्दा और बदबूदार पदार्थ निकल रहा हो तो उसका गर्भाधान न कराये एवं उसका पशु चिकित्सक से परीक्षण करवाना चाहिए।
- सुबह मदकाल के लक्षण प्रकट होने पर शाम को गर्भाधान करवायें और शाम को लक्षण प्रकट होने पर दूसरे दिन सुबह गर्भाधान करवायें।
- मौसम का प्रजनन पर असर पड़ता है। विशेषतौर पर गर्मियों में मादा पशुओं को सुबह–शाम गर्मी के लिए देखना चाहिए तथा समय का ध्यान रखते हुए प्राकृतिक अथवा कृत्रिम गर्भाधान करवाना चाहिए।

2. दुधारू पशुओं का चुनाव

दुधारू भैंस का चुनाव सामान्यत: उनकी ल्योटी के आधार पर किया जाता है। पशु की दुग्धावस्था का भी ध्यान रखना आवश्यक होता है। दुधारू पशु की खाल पतली, चिकनी तथा शरीर तिकोने जैसे होना चाहिए। चारों थन अच्छे, बड़े आकार व बराबर होने चाहिए। जहाँ तक संभव हो पशु अच्छी नस्ल का ही खरीदना चाहिए। दूसरे व तीसरे ब्यांत के तुरंत ब्याये पशु ही खरीदने चाहिए।

3. पशु आवास व्यवस्था एवं प्रबंधन

वांछित उत्पादन प्राप्त करने के लिए उत्तम प्रबंधन व्यवस्था नितांत आवश्यक हैं यदि दूध देने वाली भैंसों का ठीक प्रकार से प्रबंधन किया जाये तो भैंसें अधिक समय तक दूध देती है। अत: समुचित प्रबंधन हेतु उपयोगी बिंदु निम्नलिखित प्रकार से हैं –

- आवास स्वच्छ, हवादार एवं प्रकाशयुक्त होना चाहिए।
- पशुशाला इस प्रकार से होनी चाहिए कि पशु को अधिक सर्दी, गर्मी एवं वर्षा से बचाया जा सकें।
- पशु–आवास के चारों और छायादार वृक्ष होने चाहिए।

- स्वच्छ एवं ताजे पानी का समुचित प्रबंध होना चाहिए।
- सर्दियों में सूखे एवं स्वच्छ बिछावन का पर्याप्त प्रबंध होना चाहिए।
- पशु आवास का फर्श फिसलने वाला नहीं होना चाहिए। संभव हो तो पक्की ईंटों का फर्श बनवाना चाहिए। फर्श की ढलान उपयुक्त होनी चाहिए।
- गर्मियों में भैंसों को 2-3 बार पानी से नहलाना चाहिए।
- पशुओं की संख्या पशुशाला के आकार के अनुसार होनी चाहिए। थोड़ें स्थान में अधिक पशु न रखें।
- विभिन्न श्रेणी के पशुओं को उम्र के अनुसार अलग-अलग बाड़ें में रखना चाहिए।
- दूध पूर्ण हस्त विधि द्वारा निकालना चाहिए।
- दूध निकालते समय पशुओं को डराना व मारना नहीं चाहिए।
- उग्र व्यवहार के पशुओं को समूह से अलग रखना चाहिए।

4. आहार व्यवस्था

दुधारू पशुओं के भोजन का प्रबंध उचित समय व उचित मात्रा में करना चाहिए। पशु को दिये जाने वाला आहार का कुछ हिस्सा शरीर निर्वाह हेतु खर्च होता है तथा बचे हुए पोषक तत्त्वों का उपयोग दूध उत्पादन के लिए होता है। अत: आहार व्यवस्था के लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

- पशु को आहार उनके शरीर भार, दूध उत्पादन की मात्रा के आधार पर देना चाहिए।
- पशुओं को हरा चारा पर्याप्त मात्रा में देना चाहिए।
- उचित फसल चक्र अपनाकर वर्षभर हरे चारे का प्रबंध किया जा सकता है।
- गाय/भैंस के बच्चों का नियमित रूप से सही समय पर, सही मात्रा में दूध पिलाएँ।
- जन्म के 1-2 घण्टें के अन्दर खीस अवश्य पिलाएँ।
- आहार परिवर्तन यदि आवश्यक हो तो धीरे-धीरे बदलना चाहिए।
- खनिज मिश्रण प्रत्येक पशु को अवश्य देना चाहिए।
- पशु के लिए राशन बनाते समय शरीर के लिए आवश्यक सभी तत्त्वों का समावेश करना चाहिए।

5. स्वास्थ्य व्यवस्था

पशुओं को बीमारियों का उपचार करने से उनकी रोकथाम अधिक लाभदायक है। पशुओं को स्वस्थ व निरोगी बनाये रखने के लिए निम्न बातों पर ध्याान देना आवश्यक है :

- पशुओं व बच्चों को बाह्य व आंतरिक परजीवियों से समय-समय पर बचाव हेतु उपाय करने चाहिए।
- कटड़ें-कटड़ियों को पेट के कीड़ों से बचाने के लिए जन्म के 10 दिन के अन्दर-अन्दर कृमिनाशक दवा पिलानी चाहिए। तीन माह की आयु तक हर 20 दिन बाद दवा पिलानी चाहिए। इसके पश्चात् 6 माह की आयु तक दो माह के अंतराल पर तथा बाद में 3 माह के अंतर पर दवा देनी चाहिए।
- बच्चों को कम से कम तीन माह की आयु तक दूध पिलाना चाहिए जिससे मृत्यु दर में कमी आती है।
- दुधारू पशुओं को स्वस्थ रखनें के लिए उन्हें बीमारियों से बचाव के टीके जैसे गलघोंटू, मुँह-खुर व लंगड़ा बुखार आदि समय-समय पर लगवायें।

- पशु आवास को मक्खी-मच्छर तथा अन्य कीड़ें-मकोड़ों से मुक्त रखना चाहिए। इसके लिए समय-समय पर कीटनाशक दवाओं का छिड़काव करना चाहिए।
- पशुओं में खान-पान व व्यवहार में कुछ भी अंतर या परिवर्तन आने पर पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।
- संतुलित आहार द्वारा दुग्ध ज्वर, कीटोसिस व अन्य पोषण की कमी से होने वाली बीमारियों से बचाव किया जा सकता है।
- बीमारी आने पर प्रभावित पशुओं को स्वस्थ पशुओं से तुरंत अलग कर देना चाहिए।
- बीमार पशु का दूध कटड़ें-कटड़ियों को नहीं पिलाना चाहिए।
- बीमार पशु को पानी पीने हेतु गाँव के तालाब व जोहड़ आदि में नहीं ले जाना चाहिए।
- छोटे पशुओं को बड़े पशुओं के साथ नहीं रखना चाहिए।
- कृत्रिम गर्भाधान पद्धति का प्रयोग करने से बहुत से प्रजनन रोगों को कम किया जा सकता है।
- मेले या प्रदर्शनी के तीन हफ्ते तक पशु को अन्य पशुओं के समूह में नहीं मिलाना चाहिए और नियमित चिकित्सकीय परीक्षण होना चाहिए।
- किसी भी नयी ईमारत में ले जाने से पहले पशुओं के पैर निर्जीवकृत पदार्थ में डुबोने चाहिए।
- किसी भी संक्रामक रोग की आशंका होने पर पशु चिकित्सक से बिना विलंब के सम्पर्क करें।

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	पशु विज्ञान केन्द्र	वैज्ञानिक का नाम
1.	कृषि विज्ञान केन्द्र, अम्बाला	डॉ. ओमप्रकाश महला
2.	फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करनाल बाई पास चौक, कैथल	डॉ. राजेन्द्र सिंह श्योकन्द
3.	वैटेरनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत	डॉ. इन्द्रजीत सिंह
4.	कृषि विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद	डॉ. रमेश कुमार
5.	कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा	डॉ. बी.एस. श्योकन्द
6.	कृषि विज्ञान केन्द्र, भिवानी	डॉ. धर्मवीर सिंह दहिया
7.	कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक	डॉ. राजेन्द्र सिंह
8.	युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी	डॉ. अभय सिंह यादव
9.	नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गाँव	डॉ. कृष्ण कुमार यादव
10.	विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार	डॉ. सज्जन सिंह एवं डॉ. देवेन्द्र सिंह

पशु प्रजनन में अपनाएँ आधुनिक तकनीक

राजेन्द्र सिंह

पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

''देशां में देश हरियाणा जित दूध दही का खाणा''। जिसके घर मुर्रा उसका पूत ताकतवर व स्वस्थ घणा'। इस कहावत को प्रमाणित कर दिया हमारे प्रदेश के खिलाड़ियों के द्वारा हाल के आयोजित प्री-कब्बड्डी तथा ओलम्पिक व राष्ट्रमण्डल खेलों में अपना नाम दर्ज करवा कर। मुर्रा की मांग भारतवर्ष के अन्य प्रदेशों में ही नहीं बल्कि विदेशी भी इसकी तरफ लालायित रहते हैं तथा इस कहावत के साथ प्रदेश को पहचानते हैं 'मुर्रा है जहाँ हरियाणा है वहाँ'। अगर हम अपने पशुओं की प्रजनन क्रिया में आधुनिक तकनीक अपनाकर, सुचारू रूप से ब्यांतकाल रखकर, दूध उत्पादन बढ़ाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं।

आज हमारे प्रांत के तकरीबन गाँव के हर घर में मुर्रा है तथा प्रदेश में भैंसों की संख्या लगभग 60 लाख है तथा गाय 15 लाख हैं और दूध का उत्पादन 6.66 मीलियन टन के करीब है। हरियाणा राज्य में प्रति व्यक्ति दूध 708 ग्राम उपलब्ध है तथा राष्ट्रीय उपलब्धता हमारे राज्य से करीब तीसरा हिस्सा कम है। अगर हम पशुधन में 2020 के लिए आधुनिक तकनीक अपनाकर कार्य करेगें तो अनुमानित प्रगति इस प्रकार से हो सकती है। अगर कृत्रिम गर्भाधान जो आज 60 प्रतिशत तक अपनाया है को बढ़ाकर 90 प्रतिशत तक पशुपालक अपनाएंगे तो दूध का उत्पादन 12 मीलियन टन होगा जिससे प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता 1000 ग्राम हो सकती है इसके साथ-साथ हमारी जनसंख्या का स्वास्थ्य भी इस प्रकार से होगा 'जो मुर्रा का दूध पियेगा, वह लम्बा जीयेगा', क्योंकि भैंस के दूध में क्लोस्ट्रॉल की मात्रा कम होती है तथा विशेष तौर पर हृदय रोगियों व सेहत पसंद लोगों के लिये अच्छा रहता है। प्रदेश के पशुपालकों को कुछ आधुनिक ज्ञान व जागरूकता की कमी होने के कारण दुधारू पशुधन में प्रजनन सम्बन्धी विकार व समस्याएँ आ जाती हैं। खैर इसके लिए अब हमने प्रदेश के पशु पालकों को जागरूक बनाने के लिये एक योजना तैयार की है जिसके तहत हम प्रदेश के पशुपालक तक हमारी पशुधन सम्बन्धी सभी योजनाओं की जानकारी पहुँचाने की कोशिश करेंगें। जैसे कि हमारी भैंस 12 से 14 महीने में हर वर्ष ब्यानी चाहिए तथा कम से कम 300 दिन तक एक ब्यांतकाल में दूध प्राप्त होना चाहिए। इस क्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिये हमें निम्नलिखित बातों का उचित प्रबन्ध एवं अमलीजामा पहनाना है :-

कुछ बातें जो विशेष तौर से पशुपालकों ने अच्छी तरह ध्यान में रखकर जैसे गर्मी में आये पशु को पहचानना। यदि पशुपालक ने इस बात पर अच्छी तरह ध्यान नहीं दिया अर्थात गर्मी में आये पशु को नहीं पहचाना तो फिर दोबारा गर्मी में आने के बाद 21 दिन पर चली जाती है। इसलिए यह दैनिक व्यवस्था में पशुपालन के व्यवसाय में सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।

इसके साथ-साथ ब्याने की तिथि

सबसे पहले हमें पता होना चाहिए कि हमारा पशु किस तारीख को ब्यांता था। इसके ठीक 21 दिन बाद पशु गर्मी में आता है, इस समय पशु की गर्मी को पहचानना बहुत ही जरूरी है। परन्तु देखने में आया है कि हमारे ज्यादातर किसान तथा पशुपालक भाईयों को पता ही नहीं चलता कि पशु गर्मी में आया है। इसके लिए पशुपालक भाईयों को बताना चाहेंगें कि पशु गर्मी में आता है तब क्या-क्या लक्षण दिखाता है -

1. मुँह से बोलती है। यानि बार-बार रम्भाने की तेज कड़क आवाज करना।
2. योनि सूजी हुई, लाल व चिपचपी हो जाती है तथा उसमें चिकना पदार्थ निकलता है।
3. गर्म पशु दूसरे पशु पर चढ़ता है।
4. गर्म पशु बैचेन रहता है तथा खाना पीना कम कर देता है तथा अन्य पशुओं से अलग रहता है।

5. पशु दूध की मात्रा कम कर देता है तथा डोका मोड़ लेता है।

6. गूंगा आमा।

इसलिए इस तरह के लक्षण देखने के लिए पशु को हमें सुबह तथा साँयकाल रोजाना ध्यानपूर्वक देखना चाहिए तथा रोजाना सांड को सुंघाना चाहिए। ब्याने की तिथि को ध्यान में रखना चाहिए व पहली गर्मी में मादा पशु को सांड से नहीं मिलवाना चाहिए। ज्यादातर गाय गर्मी में 8-24 घण्टे तक रहती हैं तथा उसे सांड से मिलाना या कृत्रिम गर्भाधान गर्मी के अंतिम 8 घंटे में करवाना चाहिए। इस तरह भैंस में गर्मी 12 से 36 घण्टे तक रहती है तथा उसे सांड से मिलाना या कृत्रिम गर्भाधान करवाना चाहिए। मादा पशु को गर्मी के आखरी 8 घण्टे में सांड से मिलवाना चाहिए।

प्रजनन में सांड-झोटा सम्बन्धी सुझाव

1. किसान भाईयों साण्ड झुण्ड के आधे के बराबर होता है इसका मतलब है कि जो बच्चा सांड के वीर्य से पैदा होगा उसके आधे गुण बच्चे में होंगें। इसलिए सांड भी अच्छी नस्ल वाला अच्छे गुणों वाला (दूध इत्यादि) तथा ताकतवर होना चाहिए।

2. सांड का प्रजनन क्रिया के लिए प्रयोग दो साल की उम्र से पहले नहीं करना चाहिए तथा उसका वजन 300 किलोग्राम के लगभग तथा देखने में ताकतवर होना चाहिए।

3. सांड का प्रजनन में प्रयोग एक दिन में तीन बार से ज्यादा नहीं करना चाहिए तथा एक दिन छोड़कर करना चाहिए। लगातार तथा बेहिसाब सांड का प्रयोग करने से सांड शुक्राणु रहित वीर्य देने लगता है जिससे मादा भैंसों में खालीपन व फिरने की समस्या ज्यादा होती है जो कि जाने अनजाने में भैंस प्रजनन में (नये दूध करने में) योगदान देते हैं। यह मुर्रा भैंस नस्ल को बिगाड़ने/सुधारने में बहुत ही घातक व खतरनाक है। इसलिए पशुपालक भाईयों से प्रार्थना है कि प्रजनन में बुग्गी वाले झोटे की सेवा कभी नहीं लेनी चाहिए।

इसके अलावा प्रजनन सम्बन्धी समस्या के अन्य कारण ये भी हो सकते हैं

1. **पैतृक समस्या**- एक नस्ल या पशु के अवगुण उसके बच्चों में यानि के एक वंश से दूसरे वंश में आ जाते हैं। ऐसे अवगुणों का पशुपालकों को ध्यान रखना चाहिए तथा अपने पशु का पशु चिकित्सक से ही इलाज करवाना चाहिए।

2. पशु शरीर में हार्मोनों के असंतुलन के कारण।

3. **संक्रमण रोग व समस्या**- विशेष तौर से बच्चा गिराने की समस्या व टी.बी. इत्यादि। ये बीमारियाँ खासतौर से पशु से मनुष्य व मनुष्य से पशु को लग जाती है। पशुचिकित्सक से समय-समय पर जाँच व इलाज करवायें।

4. **असंक्रमण व अन्य कारण**- ये रोग विशेषतौर से पशु के ब्याने के बाद होते हैं जैसे बच्चेदानी में किसी अड़चन व रूकावट के कारण व ब्याते समय बच्चेदानी का बाहर आ जाना व जेर बाहर न निकलना तथा बच्चेदानी में जेर का सड़ जाना इत्यादि। इसके बाद पशु का बार-बार गर्मी में आना, गर्भ धारण न करना यानि (फिर) जाना इत्यादि।

   इन सभी समस्या व बीमारियों से पशुओं को निजात दिलाने के लिए हमारे हर पशु हस्पताल में अनुभवी पशु चिकित्सक हमेशा उपलब्ध रहते हैं। आप उनकी सेवाएँ जरूर लें।

खनिजों की कमी तथा उसका प्रबन्ध

खनिजों की कमी के कारण पशु में प्रजनन ताकत की कमी, बांझपन तथा समय पर गाभिन न होने की समस्या आ जाती है। खासतौर से कैल्शियम, फास्फोरस, कोपर, कोबॉल्ट, जिंक, मैगनीज और आयोडीन प्रजनन पर बहुत असर डालते हैं। हमारे प्रदेश में खासतौर से भैंसों में इन सभी प्रजनन सम्बन्धी खनिजों की कमी पाई गई है। इन सभी खनिजों की कमी को पूरा करने के लिए हमें अपने पशुओं को बरसीम, रिजका, कासनी, लोबिया, बिनौले की खल, चौकर, चावल की पालिया, गेहूँ, जौं, जई व मक्का इत्यादि खिलाना चाहिए तथा जो खनिज़ मिश्रण हमारे हर गाँव के पशु हस्पताल में उच्च गुणवत्ता वाला आई.एस.आई. मार्का वाला मुफ्त मिलता हैं तथा अपने पशुओं को हर वर्ग के पशुओं को नीचे लिखे हिसाब से खिलायें तथा खनिज़ों से कमी वाली बीमारियों से निजात दिलायें व

प्रजनन बढ़ायें जैसे रोजाना छोटे बछड़े, कटिया को 15–20 ग्राम तथा दूध देने वाले पशुओं को 100 ग्राम तथा बीच की बड़ी कटिया तथा बछड़े को 20–30 ग्राम देना चाहिए।

मौसम का असर

सर्दी या गर्मी के मौसम का भी प्रजनन पर असर रहता है। सर्दी तथा सामान्य मौसम में तो मादा पशु गर्मी में आता रहता है तथा नया दूध होता रहता है। ज्यादातर गर्मियों में पशु गर्मी में कम आता है। इसलिए गर्मियों में भी पशुगृह का तापमान सामान्य बनाकर पशुओं को रात को तथा सुबह और सांयकाल ध्यान से देखना चाहिए और मादा की गर्मी को तथा समय को ध्यान में रखते हुए साण्ड से मिलवाना चाहिए अथवा कृत्रिम गर्भाधान करवाना चाहिए। विशेष तौर से हम पशु पालक भाईयों को बताना चाहते हैं कि कृत्रिम गर्भाधान के लिए हमारे पशु चिकित्सालय व गाँवों में यह सुविधा उपलब्ध रहेगी।

आप अपने मादा पशुओं के पालन–पोषण में आधुनिक तकनीकों का इस्तेमाल करके गर्मी में आए पशु की पहचान करके, सही समय पर साण्ड से मिलाकर तथा कृत्रिम गर्भाधान करवाकर, अन्य प्रजनन सम्बन्धी समस्याओं का समाधान करके, अच्छा खान–पान व खनिजों की पूर्ति करके मौसम के असर का प्रबन्ध करके, साल में एक ब्यांत ले सकते हैं तथा 300 दिन दूध प्राप्त कर सकते हैं।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु– 1800–180–1184 (टोल–फ्री)

सोम, बुध, शुक्र (सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

पशुपालन में वर्षभर के कार्यों की सारणी

दिपिन चन्द्र यादव, देवेन्द्र सिंह बिढाण एवं विशाल शर्मा

पशु उत्पादन एवं प्रबन्धन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

पशुपालन के विभिन्न कार्यों को योजनाबद्ध तरीके से सम्पन्न करना ही पशु-प्रबन्धन का मुख्य उद्देश्य है। उचित समय व सही तरीके से कार्य पूर्ण न कर पाना पशुपालकों के लिए कई प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न कर देता है जैसे कि विभिन्न बीमारियाँ और उत्पादन क्षमता में कमी आदि। इस प्रकार से पशुपालकों को आर्थिक नुकसान का सामना करना पड़ता है। पशुपालकों के लाभ के लिए वर्ष भर की गतिविधियों को सारणीगत करने का प्रयास किया गया है।

जनवरी माह

1. पशुओं को ठंड से बचाने के लिए उचित प्रबन्ध करें।
2. पशु-आवास एवं बिछावन को साफ-सुथरा एवं सूखा रखें।
3. पशुओं के लिए ताजा व स्वच्छ पीने का पानी सुनिश्चित करें।
4. ठंड लगने की स्थिति में अथवा अन्य किसी बीमारी की आशंका होने पर पशुचिकित्सक से तुरन्त सम्पर्क करें।
5. अधिक बरसीम खिलाने से पशुओं में अफारा हो सकता है।
6. पशु-आवास में धूप का आगमन सुनिश्चित करना चाहिए।

फरवरी माह

1. तापमान परिवर्तन के प्रभाव से पशुओं का बचाव करें।
2. चारे की फसलों जैसे बरसीम, जई आदि की उपयुक्त अवस्था पर कटाई करें।
3. चारा-फसल की अच्छे उत्पादन के लिए समयानुसार सिंचाई करें।
4. पशुओं को रात्रि में भूसा/तूड़ी अवश्य दें, जिससे शारीरिक तापमान नियंत्रण में सहायता मिलती है।
5. पशुशाला में हवा का आगमन सुचारू रूप से होना चाहिए।

मार्च माह

1. पशु-आवास में कीचड़ अथवा नमी से बचाव करना चाहिए।
2. खरीफ में हरा चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु फसलों की बिजाई करें।
3. चारा-फसलों से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए अच्छी किस्म के बीज का ही प्रयोग करें।

अप्रैल माह

1. पशु का तेज धूप से बचाव करें।
2. मुँह-खुर के रोग का टीकाकरण करवायें।
3. गेहूँ के भूसे को यूरिया से उपचारित करके उसकी पौष्टिकता बढ़ा सकते हैं।
4. हरे चारे का संरक्षण (हे, साइलेज) आदि में किया जा सकता है जो हरे-चारे की कमी के समय उपयोगी होते हैं।

मई माह

1. गलघोंटू रोग से बचाव के लिए पशुओं में टीकाकरण करवायें।
2. पशुओं का लू से बचाव करें।
3. पशुओं को ठंडी जगह पर रखें तथा आस-पास वृक्ष होने चाहिए।
4. दुग्ध उत्पादन की क्षमता बनाये रखने के लिए नियमित संतुलित आहार व खनिज़ मिश्रण दें।

जून माह

1. पशु के शरीर का तापमान नियंत्रित रखने के लिए भैंसों को दिन में 2-3 बार नहलाएँ।
2. पशुओं को आहार सुबह जल्दी तथा शाम को या रात को देना चाहिए।
3. पीने का पानी ठंडा व छायादार जगह पर होना चाहिए।
4. पशुशाला खुली व हवादार होनी चाहिए।
5. गर्मियों में मादा-भैंसों को सुबह-शाम गर्मी (मद) के लिए जरूर देखना चाहिए।

जुलाई माह

1. ब्याने वाले पशु का विशेष ध्यान रखें।
2. दुधारू पशुओं का ब्याने के बाद दुग्ध ज्वर, कीटोसिस आदि से बचाव करें।
3. पशुओं एवं नवजात बच्चों का आन्तरिक एवं बाह्य परजीवियों से बचाव करें।
4. पशुशाला में कीटाणुनाशक दवा का इस्तेमाल करें।

अगस्त माह

1. बरसात के मौसम में पशु-आवास में साफ-सफाई पर विशेष ध्यान दें।
2. पशुओं को पीने का साफ पानी सुनिश्चित करवाना चाहिए।
3. पशुओं के खुरों की जाँच करते रहे व 5-7 दिन के अन्तराल पर लाल-दवाई से साफ करें।
4. मक्खी, मच्छर व अन्य परजीवियों का उपचार व दवाई का छिड़काव पशु-चिकित्सक की सलाह पर समय-समय पर करें।

सितम्बर माह

1. पशुओं में गर्मी के लक्षणों पर गौर करना चाहिए तथा उचित समय पर गाभिन करायें।
2. पशुओं को एक सप्ताह से ज्यादा बना हुआ तथा नमी वाला चारा न खिलायें।
3. नवजात पशु के खान-पान पर विशेष ध्यान दें व उपचार पशु-चिकित्सक की देख-रेख में करें।

अक्तूबर माह

1. गलघोटू से बचाव के लिए पशुओं का टीकाकरण करवायें।
2. वातावरण परिवर्तन के कारण पशुओं का बीमारी के लक्षणों या बिगड़ते स्वास्थ्य के लिए दैनिक जाँच की जानी चाहिए।
3. सर्दी प्रारम्भ होने से पहले स्वास्थ्य प्रबन्धन, पोषक व्यवस्था, खाद्य-सामग्री की लागत और पशुओं की उचित देखभाल सुनिश्चित करें।

नवम्बर माह

1. मुँह-खुर की बीमारी से बचाव के लिए पशुओं का टीकाकरण करवायें।
2. हवा, बरसात या ठंड की अवस्था में भूसे को बिछावन के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं।
3. गीले स्थान में बछड़े-बछड़ियाँ/कटड़े-कटड़ियाँ ठंड के तनाव से प्रभावित हो सकते हैं।

दिसम्बर माह

1. सर्दी से पशुओं का बचाव करने के लिए उत्तम प्रबन्ध करें।
2. पशुशाला का तापमान नियंत्रित रखें।
3. पशु के शरीर को बोरी/कंबल से ढ़क कर रख सकते हैं।
4. ठंड के मौसम के दौरान पैदा हुए नवजात पशुओं का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

पशुधन संबंधित वर्षभर ध्यान देने योग्य कार्य

- पशुओं को आयु एवं आवश्यकता के अनुसार संतुलित आहार प्रदान करें।
- दुधारू पशुओं का थनैला रोग से बचाव के लिए उचित प्रबन्ध करें।
- आंतरिक एवं बाह्य परजीवियों से बचाव के लिए नियमित अन्तराल पर दवा का प्रयोग करें।
- पशु के गर्मी के लक्षणों पर विशेष ध्यान दें तथा समय पर प्राकृतिक अथवा कृत्रिम गर्भाधान करवायें।
- दूध दोहने के लिए पूर्ण-हस्त विधि का ही प्रयोग करें।
- पशुओं को आहार में खनिज मिश्रण अवश्य दें।
- ब्याने वाले पशुओं का विशेष ध्यान रखें।
- नवजात पशु को जन्म के 1-2 घंटे के भीतर खीस अवश्य पिलायें।
- नवजात बच्चे की नाल को 1.5 से 2.0 इंच की दूरी पर बाँध कर काटना चाहिए तथा उस पर टिंक्चर आयोडिन का प्रयोग करें।
- गाभिन पशुओं का तीन माह बाद पशुचिकित्सक से परीक्षण करवायें।
- तीन बार से ज्यादा गर्मी में आने पर भी गाभिन न होने वाले पशुओं की जाँच पशुचिकित्सक से करवायें।
- पशुशाला में महीने में एक बार कीटनाशक दवाओं से छिड़काव करना चाहिए। चरी तथा पानी की टंकी/होद को रोजाना साफ करना चाहिए तथा सप्ताह में एक बार चूना डालना चाहिए।
- बीमारी आने पर प्रभावित पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए।
- गाभिन पशुओं को उचित व्यायाम करवाना चाहिए।
- शारीरिक भार-वृद्धि की दर ज्ञात करने के लिए कटड़े-कटड़ियाँ/बछड़े-बछड़ियों का वजन मापना आवश्यक है।
- दूध निकालने से पहले थनों को जीवाणुनाशक दवा जैसे (लाल दवा) से धोकर साफ कपड़े से पोंछना चाहिए।
- भैंसों के खानपान का समय और आहार जब तक आवश्यक न हो परिवर्तित नहीं करना चाहिए और यदि आवश्यक हो तो धीरे-धीरे बदलें।
- किसी भी आपात स्थिति से निपटने के लिए पशु-चिकित्सक या पशु वैज्ञानिक से संपर्क करें।

दूध एक सम्पूर्ण प्राकृतिक आहार

सज्जन सिंह[1] एवं दलजीत सिंह[2]

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय एवं [2]पशु प्रजनन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

दूध प्राचीन समय से ही मानव पोषण का एक प्रमुख स्त्रोत है। इसकी रचना, उच्च पोषण शक्ति तथा सरलता से पच जाने के कारण इसको 'सम्पूर्ण प्राकृतिक आहार' कहा जाता है। दूध में मानव शरीर की बढ़ोतरी तथा शारीरिक क्रियाओं के लिए सभी आवश्यक तत्त्व सही मात्रा एवं उचित अनुपात में होते हैं। दूध में शरीर की रचना करने वाले प्रोटीन, हड्डियाँ बनाने वाले खनिज़, स्वास्थ्यवर्धक विटामिन एवं ऊर्जा प्रदान करने वाले कार्बोहाइड्रेट तथा वसा होती है। गाय/भैंस से जो द्रवरूपी पदार्थ प्राप्त होता है, इसे दूध कहते है, लेकिन तकनीकी भाषा में दूध की परिभाषा कुछ इस प्रकार होती है, दूध एक ताजा, साफ-सुथरा स्त्राव है, जो दुग्धग्रंथियों से प्राप्त होता है, जो अच्छी तरह खिलाई-पिलाई गई एक या ज्यादा गायों से संपूर्णत: बिना रूके दुग्धदोहन करने के पश्चात् प्राप्त होता है तथा जिसमें गाय के प्रसव से 7 दिन पहले और 5 दिन प्रसव के बाद प्राप्त स्त्राव (कोलोस्ट्रम) शामिल नहीं है। अर्थात इस शाखा में न बैठने वाले स्त्राव जैसे मिलावटयुक्त द्रव पदार्थ, अप्राकृतिक द्रव पदार्थों को दूध नहीं कहा जा सकता, क्योंकि आजकल दूध के नाम पर रसायन इस्तेमाल कर दूध जैसा सफेद द्रव बनाकर कुछ व्यक्ति बेचते हैं।

रिकंबाइंड (सूखा दूध) दूध- इसका मतलब ऐसा दूध जो बटरऑयल (बिना पानी दुग्ध वसा), मलाई निकाले हुए दूध से बनाचूर्ण तथा पानी को मिलाकर तैयार किया जाता है।

स्टर्लाइज्ड मिल्क अर्थात निर्जतुक दूध- इसका मतलब ऐसा दूध जो पहले एकजीव (होमोजिनाइज्ड) किया जाता है। तत्पश्चात् 100 डिग्री सैंटीग्रेड या इससे कुछ ज्यादा तापमान पर गर्म कर ठंडा किया जाता है ताकि वह मानव द्वारा सेवन हेतु सामान्य तापमान पर कम से कम 7 दिनों तक बिना खराब हुए टिक सकता है।

होमोजिनाइज्ड दूध- इसका मतलब ऐसा दूध जो एक विशेष यंत्र में एक महीन छिद्र के जरिए जोर से (2500 पोंडस प्रति चौरल इंच) धकेला जाता है, जिससे दूध में मौजूद वसा के कण टूटकर 2 माइक्रॉन या इससे कम के हो जाते है तथा यह दूध 45 घंटों तक बिना हिलाए रखने पर भी उसकी सतह पर मलाई नहीं आती। आजकल हम डेयरी से कम मात्रा में दूध खरीदकर लाते है वह अकसर होमोजिनाइज्ड अर्थात एकजीव किया होता है। इसलिए उसको गर्म करने पर भी ऊपरी पृष्ठ भाग पर मलाई नहीं आती।

खुशबूदार दूध या फलेवर्ड मिल्क- इसका मतलब ऐसा दूध जिसमें कोई खुशबूदार द्रव/सुगंधित द्रव मिला होता है। ज्यादातर वैनीला, स्ट्रॉबेरी, पाईनैपल व केले जैसी खुशबू इस्तेमाल होती है। अत: दूध पार्लर पर लोग शौकिया तौर पर इसे स्ट्रॉ (नली) डालकर ठंडे रूप में सेवन करते हैं। सिर्फ खुशबू डालने से दूध का मूल्य पाँच गुनाया ज्यादा प्राप्त होता है। अत: किसान भाई तथा दूध उत्पादक भाई दूध को ज्यों की त्यों बेचने की बजाए खुशबूदार दूध इलायची या जायफल इत्यादि खुशबूदार चीजें डालकर बनाकर बेचे तो 5 गुना ज्यादा मुनाफा मिल सकता है।

फरमेंटेड दूध यानि किण्वीन दूध- इसका मतलब ऐसा दूध जिसको सूक्ष्म जीवाणु संवर्धन (जामन) डालकर बनाया जाता है।

नेचुरल बटरमिल्क अर्थात छाछ- मक्खन बनाने हेतु दूध से निकाली गई क्रीम (मलाई) को जामन डालकर फिर उसका मंथन करने की प्रक्रिया में मक्खन निकालने के बाद जो द्रव पदार्थ बचता है, उसे नेचुरल बटरमिल्क अर्थात छाछ कहते है। भारत में देशी मक्खन बनाने हेतु दही मथकर (मंथन करके) मक्खन निकालने के बाद बर्तन में जो द्रव बचता है। इस छाछ को वैसे ही या थोड़ा सादा नमक, काला नमक डालकर और मूल्य बढ़ाकर ज्यादा लाभ मिलता है। अत: किसान भाई इस प्रयोग को आसानी से कर सकते हैं।

कल्चर्ड बटरमिल्क यानि संवर्धित छाछ- पाश्चरीकृत मलाई रहित दूध में दुग्धाम्ल निर्माण करने वाले जीवाणुओं का संवर्धन (जामन) डालकर किण्वीत कर प्राप्त होने वाला दूध।

असिडोफिलस दूध- यानि दूध को लक्टोबॅसिलस असिडोफिलस नामक जीवाणुओं को संवर्धन डालकर किण्वन क्रिया करने के बाद प्राप्त दूध। इस प्रकार के दूध को जिस स्थिति में रखते है, या जिस प्रकार की प्रक्रिया उस पर करते है। उस पर निर्धारित विभिन्न किस्म के दूध तैयार किये जाते है। व्यापारिक स्तर पर ऐसी किस्मों का दूध बनाकर बेचने से विभिन्न वर्ग के ग्राहकों को आकर्षित किया जाता है तथा ज्यादा लाभ अर्जित कर आर्थिक उन्नति की जा सकती हैं। दूध में वैसे भी कई तरह के सूक्ष्मजीव तेजी से पनपते है अत: उसे उबालने से ज्यादातर घातक सूक्ष्मजीव मर जाते है और सुरक्षित हो जाता है। दूध पीना सब के लिए अच्छा होता है। कई लोगों की यह धारणा है कि दूध सभी को पीना चाहिए। यह धारणा पूर्णत: सच नहीं है। दूध में जो वसा मौजूद होती है। उसमें ट्राईग्लिसेरॉइड्स होते हैं और जिन लोगों को खून में नुकसानदायक कोलेस्ट्रॉल बढ़ने की शिकायत होती है उन लोगों को दूध कम ही प्रयोग करना चाहिए।

दूध के सम्बन्ध में कुछ शब्द जानना जरूरी है

होल मिल्क- मतलब प्राकृतिक रूप से मादा पशु से प्राप्त सम्पूर्ण दूध जिसमें मूल रूप से जो भी संघटक यानि वसा, प्रोटीन, दुग्ध शार्करा तथा खनिज शामिल होते हैं वह उसी मात्रा में उसमें मौजूद होते हैं तथा उनमें कोई भी बदलाव नहीं किया गया है।

स्कीमड मिल्क- ऐसा दूध जिसमें मलाई निकाल ली गई है।

सेपेरेटेड मिल्क - दूध से मलाई निकालने वाली मशीन में सम्पूर्ण दूध डालकर उससे करीब-करीब पूरी मलाई (वसा) निकाल दी गई है। इसमें मात्र 0.4 प्रतिशत वसा शेष रह जाती है।

टोंड मिल्क- जिस दूध में 3 प्रतिशत वसा व 9 प्रतिशत एस.एन.एफ. होती है। दूध का भाव उसमें स्थित मलाई के आधार पर तय होता है। अत: उपरोक्त दूध सस्ते दामों पर उपलब्ध होता है।

फुल क्रीम मिल्क - ऐसा दूध जिसमें प्राकृतिक रूप से जितनी भी वसा होती हैं उतनी ही रखी जाती है। इसमें फैट 6 प्रतिशत व एस. एन.एफ. 9 प्रतिशत होती है।

स्टॅंडरडाइज्ड मिल्क- ऐसा दूध जिसकी वसा की मात्रा 4.5 प्रतिशत तथा एस.एन.एफ पदार्थ की मात्रा 9 प्रतिशत होती है।

रीकांस्टीच्यूटिड मिल्क- ऐसा दूध जो 1 भाग सम्पूर्ण दुग्धचूर्ण को 7 से 8 भाग पानी में घोलकर तैयार किया जाता है। दूध से हर शख्स वाकिफ है। बचपन से बुढ़ापे तक दूध का कही न कही जरूर सम्बन्ध आता है। छोटे बच्चे का तो उसके जन्म दिन से ही दूध से सम्बन्ध जुड़ जाता है तथा शुरूआती 6 माह तक वह माँ के दूध पर ही पलता है। दूध का हमारी निजी ज़िंदगी में, सामाजिक जीवन में बड़ा महत्त्व रहा है। पुराने जमाने से आज भी दूध अर्पण कर मेहमानों का स्वागत किया जाता है। हमारे धार्मिक जीवन में पूजा-पाठ, उपवास आदि में दूध का इस्तेमाल होता है। हमारे देश के अर्थशास्त्र में दूध तथा दुग्धजन्य व्यंजनों का बड़ा योगदान है।

दुधारू पशुओं का गर्मियों में उचित रख-रखाव

सज्जन सिंह[1], दलजीत सिंह[2] एवं रेखा दहिया[1]

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय, [2]पशु प्रजनन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है। यहां पशुपालन सामान्यत: कृषि का एक महत्त्वपूर्ण अंग है, जो कि देश की अर्थव्यवस्था में मुख्य भूमिका अदा करता है। पिछले कुछ वर्षों से देश की कुल आय में कृषि का योगदान घट रहा है। वहीं पर पशुपालन से इसमें निरन्तर वृद्धि हो रही है। पशुधन क्षेत्र का कृषि उत्पाद में 25 प्रतिशत भाग है और डेयरी क्षेत्र इसमें दो तिहाई योगदान करता है। वर्तमान में देश का कुल दूध उत्पादन 11.0 करोड़ टन है, तथा प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता भी 250 ग्राम है। दूध उत्पादन में पंजाब नम्बर वन पर है व हरियाणा दूसरे स्थान पर है। प्रति व्यक्ति पंजाब में 800 ग्राम, हरियाणा में 607 ग्राम दूध एक व्यक्ति के हिस्से आ रहा है।

पशु संख्या की दृष्टि से भारतवर्ष में सम्पूर्ण विश्व की लगभग 15 प्रतिशत गाय एवं 55 प्रतिशत भैंसें है। प्रदेश में लगभग 70 लाख भैंस और गाय है, जिसमें से 55 लाख भैंस व 15 लाख गाय है। हमारे देश में कुल डेयरी पशुओं की संख्या में भैंसों की संख्या लगभग एक तिहाई है, पर देश के कुल दूध उत्पाद का लगभग 55 प्रतिशत भाग भैंसों द्वारा प्राप्त होता है यद्यपि दूध उत्पादन की दृष्टि से भारत विश्व का अग्रणी देश बन चुका है, परन्तु प्रति पशु दूध उत्पाद की दृष्टि से हम अभी भी बहुत पिछड़े हुए है। अपने पशुओं की उत्पादकता के स्तर को बढ़ाने की अत्यन्त आवश्यकता है, इसके लिए जरूरी है कि पशुओं के उचित रख-रखाव व प्रबन्धन पर विशेष ध्यान दिया जाए। भारत का उत्तर पश्चिमी भाग डेयरी व्यवसाय के लिए जाना जाता है। यहां विश्व की सर्वोत्तम भैंसों की नस्लें जैसे मुर्रा, नीली-रावी, सूरती, जाफराबादी व भदावरी आदि पाई जाती है। देश की गायों की दुधारू नस्ले जैसे साहीवाल, रैड-सिंधी, गिर, थारपारकर देसी गाय, हरधेनू आदि भी इसी क्षेत्र में पाई जाती है। भारत के उत्तर पश्चिमी क्षेत्र में मौसम की विषमताएँ अत्यधिक देखने को मिलती है। यहां गर्मियाँ तेज व अधिक समय तक होती है। गर्मियों में वायुमण्डलीय तापमान 45^0 सेल्सियस से भी अधिक हो जाता है, जो कि दुधारू पशुओं पर अपना अत्यधिक दुष्प्रभाव डालता है।

गर्मियों में दुधारू पशुओं पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव

1. गर्मियों में जब वायुमण्डलीय तापमान दुधारू पशुओं के शारीरिक तापमान से अधिक हो जाता है तो पशुओं के शरीर में उष्मा का उत्पादन कम होता है, इससे पशु सूखा चारा खाना कम कर देते हैं, क्योंकि सूखे चारे को पचाने में शरीर में उष्मा का उत्पादन अधिक होता है। ये कम चारा खाना उनकी दूध उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, क्योंकि कम चारा खाने के कारण दूध उत्पादन के लिए आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।
2. गर्मियों में शरीर की उष्मा को निकालने व अपने शारीरिक तापमान को स्थिर रखने के लिए पशु शरीर से पानी का पसीने के रूप में वाष्पीकरण करते हैं। पानी को शरीर से वाष्पित होने के लिए पशुओं को शरीर से उष्मा लेनी पड़ती है। जिससे पशुओं के शरीर का तापमान कम हो जाता है, पशु अपनी श्वसन क्रिया को बढ़ाकर पानी की वाष्पीकरण क्रिया को बढ़ावा देते हैं। इन सबके कारण पशुओं की पानी की आवश्यकता गर्मियों में बढ़ जाती है।
3. गर्मियों के मौसम में पशुओं के दुग्ध उत्पादन में गिरावट आ जाती है, जिसका मुख्य कारण चरी की उपलब्धता व गुणवत्ता में कमी व पशुओं का गर्मियों में कम चारा खाना है। इसके अतिरिक्त पशु अपनी शारीरिक ऊर्जा को दूध उत्पादन की अपेक्षा अपने शारीरिक तापमान को सामान्य (38.6^0 सेल्सियस) बनाए रखने के लिए उपयोग में लाने को प्राथमिकता देती है। जिससे पशुओं की दुग्ध उत्पादन हेतु पर्याप्त ऊर्जा उपलब्ध नहीं हो पाती व उनके उत्पादन में कमी आ जाती है।

4. गर्मियों में दुधारू पशुओं खासकर भैंसों की प्रजनन क्रिया क्षीण (मद) हो जाती है। उनके मद चक्र अवस्था का काल अधिक हो जाता है एवं मद अवस्था का काल व उग्रता भी मध्यम पड़ जाती है। ऐसी स्थिति में अधिकतर पशुपालक अपने दुधारू पशुओं में मद काल की ठीक से पहचान नहीं कर पाते तथा पशु समय पर गर्भाधान से वंचित रह जाता है। इस कारण पशुओं के पहले ब्यांत की आयु व एक ब्यांत से दूसरे ब्यांत में अंतर का समय भी बढ़ जाता है। परिणाम स्वरूप पशु काफी समय तक बिना दूध दिए रहते है। जिससे पशुपालक की अत्यधिक आर्थिक हानि होती है।

5. अत्यधिक गर्मी में पशुओं को लू लगने का खतरा बना रहता है। लू लगने से पशु बीमार पड़ जाते है, जिससे उनके दूध उत्पादन में कमी तो आती ही है साथ ही बीमार पशु के इलाज पर पशुपालकों को काफी खर्च करना पड़ता है। अगर पशु की समय पर उचित देखभाल न कि जाए तो बीमार पशु की मृत्यु तक हो जाती है, जिससे पशुपालक भाईयों को काफी आर्थिक हानि होती है।

गर्मियों में पशुशाला में मच्छर, मक्खी व परजीवियों का प्रकोप अधिक बढ़ जाता है, जिससे पशुओं के दूध उत्पादन में गिरावट के साथ-साथ उनके बीमार होने का खतरा भी बढ़ जाता है। अत: गर्मियों में होने वाले इन दुष्प्रभावों को कम करने के लिए पशुपालकों को निम्नलिखित बातों का ध्यान देना अति आवश्यक है :

1. पशुओं के लिए साफ-सुथरी व हवादार आवास की व्यवस्था होनी चाहिए। पशुगृह का फर्श पक्का व फिसलन रहित होना चाहिए तथा मूत्र व पानी के निकास हेतु उपयुक्त ढलान होना चाहिए। पशुगृह में पशुओं को सीधी धूप से बचने के लिए पर्याप्त छाया उपलब्ध होनी चाहिए।

2. पशुगृह की छत उष्मा की कुचालक हो, ताकि गर्मियों में अत्यधिक गरम न हो। अगर पशुगृह की छत पक्की या एस्वेस्टस सीट की बनी हो तो उस पर अधिक गर्मी के दिनों में 4 से 6 इंच मोटी घास-फूस की परत डाल देनी चाहिए। ये परत उष्मा अवरोधक का कार्य करती है, जिसके कारण पशुशाला के अंदर का तापमान कम बना रहता है।

3. सूर्य की रोशनी को परावर्तन करने हेतु पशुगृह की छत पर सफेद रंग करना या चमकीली एल्मोनियम शीट लगाना भी लाभप्रद पाया गया है।

4. पशुगृह छत की ऊँचाई कम से कम 10 फूट होनी आवश्यक है, ताकि हवा का समुचित संचार पशुगृह में हो सके तथा छत की तपन से पशुओं को बचाया जा सके।

5. पशुगृह की खिड़कियाँ व दरवाज़ों व अन्य खुली जगहों पर जहाँ से तेज गरम हवा आती हो, बोरी या टाट आदि टांग कर पानी का छिड़काव कर देना चाहिए।

6. पशुगृह में पंखों व कूलर आदि का उपयोग भी पशुओं को गर्मियों से बचाने हेतु लाभप्रद होता है अत: पशुपालक भाई अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार इनका उपयोग कर सकते हैं।

7. पशुओं के आवास गृह में अधिक भीड़-भाड़ नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक पशु को उसकी आवश्यकता के अनुसार पर्याप्त स्थान उपलब्ध करवाएँ। एक व्यस्क पशु को चालीस से पचास वर्ग फूट स्थान की आवश्यकता होती है।

8. पशुगृह के आस-पास छायादार वृक्षों का होना आवश्यक है। यह वृक्ष पशुओं को छाया प्रदान करते हैं, व उन्हें गरम लू से भी बचाते हैं।

9. पशुओं के शरीर पर दिन में तीन या चार बार जब वायुमंडल का तापमान अधिक हो तो ठण्डे पानी का छिड़काव करें। इस कार्य के लिए पशुशाला की छत के साथ में पानी छिड़कने की प्रणाली को लगाया जा सकता है। अगर पशु कम है तो पशुपालक भाई पाइप व बाल्टी आदि का उपयोग कर पशुओं पर छिड़काव कर सकते हैं। यदि संभव हो तो अत्यधिक गर्मी में भैंसों को तालाब व पोखर में ले जाएँ। प्रयोगों से यह साबित हुआ कि दोपहर को पशुओं पर ठण्डे पानी का छिड़काव उनके उत्पादन व प्रजनन क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है।

10. गर्मियों में ज्यादातर दुधारू पशु सायंकाल 6 बजे से प्रात: सात बजे की अवधि में मद में आती है। खासकर भैंसें रात्रि के 12 बजे से सुबह 5 बजे के मध्य मदावस्था के लक्षण दिखाती है। अकसर पशुपालक इस मदकाल को नहीं पहचान पाते और पशु गर्भित होने से रह जाते हैं। ऐसे पशुओं की जाँच के लिए एक नपुंसक सांड का इस्तेमाल कर सकते हैं एवं पशु मदकाल या गर्मी में होगा, उस पर सांड गर्भाधान हेतु चढ़ेगा। जब यह सुनिश्चित हो जाए कि अमुक पशु मदकाल में है तो यथासमय प्राकृतिक या कृत्रिम विधि द्वारा उस पशु का गर्भाधान करवाएँ। मदकाल के मध्य समय से आखरी एक तिहाई समय में पशुओं का गर्भाधान कराना सफल प्रजनन हेतु अत्यन्त आवश्यक है। एक ही समय पर कई बार गर्भित कराना प्राय: निरर्थक होता है।

11. पशु गर्मियों में चारा चरना कम कर देते है अत: पशुओं को चारा प्रात: या सांयकाल में ही उपलब्ध कराना चाहिए। जहाँ तक संभव हो दुधारू पशुओं के आहार में हरे चारे की मात्रा अधिक रखें। यदि पशुओं को चारागाह में ले जाते हैं तो प्रात: व सांयकाल को ही चराना चाहिए।

12. दुधारू पशुओं को पीने के लिए हमेशा स्वच्छ व ठण्डा पानी उपलब्ध कराना चाहिए, इसके लिए पानी के टैंक पर छाया की व्यवस्था हो। पानी की पाईपे जमीन के अन्दर बिछी होनी चाहिए ताकि पानी को दिन में गरम होने से बचाया जा सके। अगर जमीन का पानी पीने के लिए उत्तम है तो ट्यूबवैल (बोर) का ताजा पानी पशुओं को पीने के लिए उपलब्ध कराना चाहिए।

13. पशुओं को गर्मियों के दिनों में जब हरे चारे की कमी होती है तो 50 ग्राम खनिज लवण प्रति पशु की दर से आहार में उपलब्ध कराना चाहिए।

14. गर्मियों में पशुशाला में बाहरी परजीवियों जैसे मच्छर, मक्खी, जुएँ, चिचड़ियाँ आदि के प्रकोप को कम करने के लिए पशु पालकों को पशुशाला की साफ-सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए। पशुगृह जितना स्वच्छ व आरामदेह होगा उतना ही उत्पादन बेहतर होगा। पशुशाला की सफाई दिन में कम से कम दो बार होनी चाहिए तथा सप्ताह में एक बार फिनाइल के घोल से पशुशाला के फर्श की सफाई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त बाहरी परजीवियों की रोकथाम हेतु महीने में एक बार उपयुक्त कीट नाशक दवा का छिड़काव सभी पशुओं एवं पशुशाला में पशु चिकित्सक के परामर्श पर अवश्य करना चाहिए।

15. दुधारू पशुओं की विभिन्न संक्रामक रोगों जैसे गलघोटू, खुरपका-मुँहपका रोग, टी.बी. व ब्रुसलोसिस आदि के रोग अवरोधक टीके पशु चिकित्सक से परामर्श कर अवश्य लगवाएँ। अगर पशु बीमार हो जाए तो उसे तुरन्त स्वस्थ पशुओं से अलग कर देना चाहिए तथा इलाज कराएँ। पशुओं को आंतरिक परजीवियों से बचाने हेतु दवा भी समय-समय पर दिलवाएँ।

16. पशुपालक भाई उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए, गर्मियों के मौसम में अपने दुधारू पशुओं का रख-रखाव व पालन करेंगे तो निश्चित ही वे अपने पशुओं को ग्रीष्म ऋतु में होने वाली विभिन्न समस्याओं से बचा सकते हैं तथा उनके उत्पादन व प्रजनन क्षमता को बनाए रखते हुए डेयरी व्यवसाय से निरंतर अच्छी आय प्राप्त कर सकेंगे।

गाय भैंस के पेट की संरचना व पाचन प्रणाली

ज्योत्सना मदान एवं मीनाक्षी गुप्ता

पशु शरीर क्रिया विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

पाचन क्रिया शरीर की ऐसी प्रणाली है जो भोजन को ग्रहण करती है, फिर भोजन को क्रमशः पीस कर निगल कर उसे पचाती है और अवशोषण का काम करती है। अंततः अनपचे भोजन को शरीर से बाहर निकाल देती है। कुछ पशुओं में पेट सामान्य एक प्रकार का होता है जैसे घोड़ा, कुत्ता, और बिल्ली। ऐसे पशुओं को गैर-रोमंथक कहते है। जबकि कुछ पशुओं में मिश्रित पेट होता है जिसके चार भाग होते है- रूमेन, रेटिक्यूलम, ओमेसम व ऐबोमेसम। इस प्रकार के पशु रोमंथक या जुगाली करने वाले कहलाते है जैसे गाय, भैंस, भेड़, बकरी, हिरण, नील गाय और ऊँट। ऐसे पशु घास और चारे पर ही निर्भर होते हैं इन पशुओं को शाकाहारी कहते हैं। ऐसे पशुओं में पाचन प्रणाली भिन्न होती है। सामान्य पेट वाले पशुओं में खाना रसायन क्रिया से पचता है जबकि रोमंथक में खाना पहले सड़ता है और फिर उसमें से उत्पन्न पदार्थ आगे पाचन क्रिया में भाग लेते हैं।

पाचन क्रिया सबसे पहले मुँह में शुरू होती है। जहाँ भोजन लार ग्रन्थियों से निकले हुए लार से मिल जाता है। चारा खाने वाले पशुओं में लार की मात्रा बहुत अधिक होती है। गाय में लार की मात्रा 60 से 160 लीटर प्रति दिन होती है। गाय, भैंस आदि पशु अपना भोजन जल्दी-जल्दी खाते रहते हैं और निगलते रहते हैं व अच्छी तरह से नहीं चबाते। इस प्रकार पेट भरने के बाद ये खाना बन्द कर देते हैं। पशु चारा खा रहा होता है तो लार इसके साथ मिलती रहती है। इसके बाद भोजन रूमेन में जाता है। यह पेट का सबसे बड़ा व पहला भाग है जिसमें काफी मात्रा में पानी और लार होता है। भोजन चबा हुआ न होने के कारण हल्का होता है तथा पानी पर तैरता रहता है। कुछ समय बाद भोजन के मोटे कण वापिस भोजन नली से मुँह में आ जाते हैं जिसे पशु काफी समय तक अच्छी तरह चबाता है और इसके साथ लार मिलती रहती है। इसे जुगाली करना कहते है। उसे पशु फिर निगल लेता है। दोबारा चबाए हुए भोजन को रूमेन में उपस्थित बैक्टीरिया और प्रोटोजोआ सड़ाते है। इस क्रिया को किण्वन कहते हैं। ये जीवाणु कई तरह के होते हैं, ये सब भोजन के साथ मिल जाते है और चारे में उपस्थित विभिन्न तरह के जटिल पदार्थों को अपनी किण्वन क्रिया से उन्हे सरल पदार्थों में बदल देते हैं। रूमेन

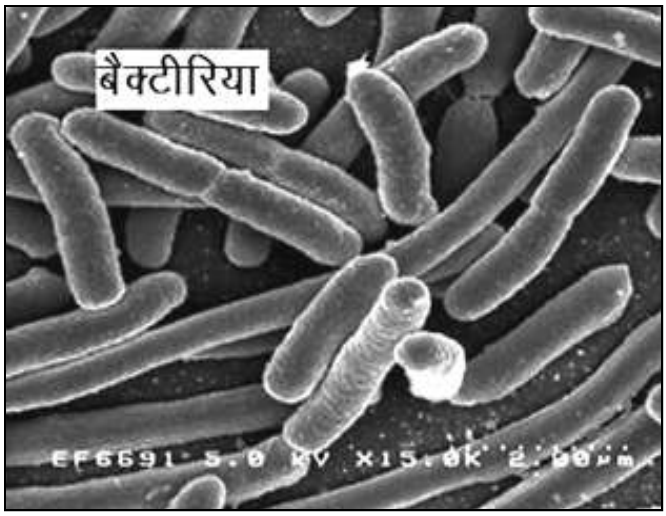

और रेटिक्यूलम दोनों भाग जुड़े होते हैं और किण्वित खाना रेटिक्यूलम में जाता है।

ये जीवाणु चारे में उपस्थित रेशे को वाष्पशील वसीय अम्ल तथा शर्करा में बदल देते हैं जिससे पशु को उर्जा प्राप्त होती है और दूध में वसा की मात्रा बढ़ती है। इस प्रकार ये जीवाणु पशु की बहुत सहायता करते हैं तथा इसके बदले में इन जीवाणुओं को रूमेन का अच्छा वातावरण तथा भोज्य पदार्थ मिल जाते हैं। इस प्रकार ये एक दूसरे की मदद करते हैं। रूमेन में उपस्थित बैक्टीरिया दाने के प्रोटीन को तोड़ कर अमीनों रसायन में बदलते हैं और अंतत: इनमें अमोनिया बनती है। इस अमोनिया को ये जीवाणु अपनी ऊर्जा और शारीरिक वृद्धि के लिए प्रयोग करते हैं इनसे ये अपने लिए प्रोटीन बनाते हैं।

गाय-भैंस को अगर घटिया किस्म के प्रोटीन खिलाए जाएँ तो ये जीवाणु उनसे अमोनिया लेकर उसका प्रोटीन बनाते हैं। जब ये जीवाणु भोजन के साथ-साथ एबोमेसम में आते हैं तो पाचन के रसायन उन्हें हजम करते हैं और ये प्रोटीन पशु के लिए शारीरिक वृद्धि का काम करते हैं। रूमेन में जब जीवाणु भोजन का किण्वन करते हैं, उस समय हानिकारक गैस कार्बन डाई-ऑक्साइड व मिथेन बनती है। जो कि पशु मुँह से निकालते हैं। अगर यह गैस किसी कारणवश रूमेन में इक्कट्ठी हो जाए तो पशु को अफारा हो सकता है।

अब ये महीन खाना पाचन के लिए एक पतली नली के जरिए ओमेसम में जाता है। यह पेट का तीसरा भाग है जो कि कई परतों से बना होता है, जो तरल पदार्थों को अवशोषित करने के बाद रक्त में मिला देता है। यहाँ से किण्वित खाना एबोमेसम में जाता है जो कि पेट का अंतिम भाग है जिसे पशु का असली पेट कहा जाता है। इस भाग में पाचन के रसायन उसे हज़म करते हैं। गाय-भैंसों का शेष पाचन तंत्र अन्य जानवरों के समान होता है। सरल पदार्थों में परिवर्तित खाना आँतों में जाता है जहाँ उसके शक्तिवर्धक और पौष्टिक तत्त्व सोख लिए जाते है, बड़ी आँत शेष तरल पदार्थ को अवशोषित कर लेती है और अनपचे पदार्थों को गोबर के रूप में शरीर से बाहर निकाल देती है।

संतुलित पशु आहार

सुभाशीष साहू, देवेन्द्र सिंह बिढाण एवं सुरेश कुमार छिकारा

पशु उत्पादन एवं प्रबन्धन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

संतुलित पशु आहार क्या होता है ?

संतुलित आहार उस खाद्य मिश्रण को कहते हैं जो पशुओं के शरीर को बनाये रखने के लिए तथा उनकी उचित बढ़ोतरी व दूध उत्पादन के लिए कई तरह के खाद्य पदार्थों द्वारा बनाया जाता है, जिसे 24 घंटों में एक पशु को खिलाया जाता है। इसमें सभी आवश्यक पोषक तत्त्व जैसे उर्जा, प्रोटीन, खनिज, विटामिन आदि उचित मात्रा और सही अनुपात में प्राप्त होते हैं। किसी भी एक खाद्य पदार्थ से सारे पोषक तत्त्व तो मिल जायेंगें परन्तु उसकी मात्रा और अनुपात शरीर की जरूरत के मुताबिक नहीं होगा। इसलिए पशुओं के संतुलित आहार में विभिन्न प्रकार के हरे चारे, कई प्रकार के अनाज, खल, इत्यादि उत्पाद को मिलाकर बनाया हुआ दाना मिश्रण तथा सूखे चारे के प्रयोग में लाये जाते हैं। संतुलित पशु आहार कैसा होना चाहिए –

- संतुलित आहार रूचिकर होना चाहिए।
- पेट भरने की क्षमता रखता हो।
- सस्ता, गुणकारी, उत्पादक तथा बदबू और फफूँद रहित होना चाहिए।
- वह अफारा ना करता हो, दस्तावार भी न हो और उस आहार में हरे चारे का समावेश हो।

संतुलित आहार कैसे बनाया जाता है ?

परिस्थितियों के अनुसार आप अपने पशुओं के लिए संतुलित आहार बनायें। जिन किसान भाईयो के पास हरा चारा उगाने के लिए जमीन और सिंचाई का साधन हो वे अपने पशुओं के लिए हरा चारा पूरे वर्ष उगायें। अच्छे गुण वाला हरा चारा पूरा वर्ष पशुओं को भर पेट खिलाया जाये तो दूध उत्पादन का खर्च बहुत कम हो जाता है तथा सभी आवश्यक पोषक तत्त्व प्रचूर मात्रा में उपलब्ध हो जाते हैं।

हरे चारे को संतुलित कैसे बनाया जाये ?

किसान भाईयो, जैसा कि आप जानते हैं चारे वाली फसलें दो तरह की होती हैं। एक दाल फलीदार वाली :- जैसे – मक्का, मकचरी, ज्वार, बाजरा, जई आदि तथा दो दाल वाली जैसे – बरसीम, रिजका, लोबिया, ग्वार आदि। एक दाल वाली चारे में – उर्जा की मात्रा अधिक होती हैं। दो दाल वाले चारे में- प्रोटीन, विटामिन और खनिज की मात्रा अधिक होती है। यदि इन दोनों चारों को मिलाकर पशुओं को खिलाया जाये तो सभी तरह के पोषक तत्त्व प्रचूर मात्रा में मिल जायेंगे। इस तरह के मिश्रित चारा उगाने के लिए आप एक कतार दो दाल वाले चारे और दो कतार एक दाल वाले चारे की बुआई करें। ऐसा करने से प्रचूर मात्रा में प्रोटीन और उर्जा युक्त हरा चारा मिलेगा और आप के खेत की उपजाऊ शक्ति भी बनी रहेगी।

पूरे साल हरा चारा मिलता रहे इसके लिए क्या करें ?

इसके लिए आप गर्मियों में दो कतार बाजरा और एक कतार लोबिया की बिजाई करें। उसके बाद बरसात के मौसम में दो कतार मक्का और एक कतार लोबिया की बुआई करें और सर्दियों में बरसीम के साथ सरसों की बुआई करें। इससे आप सर्दियों में 5 कटाई ले सकते हैं और इस तरह से पूरे साल आप को हरा चारा मिलता रहेगा। जमीन जलवायु और सिंचाई के सुविधानुसार कुछ अन्य

फसल चक्रों को भी अपनाया जा सकता है जैसे – मक्का तथा लोबिया (गर्मी में) ज्वार तथा ग्वार (बरसात में) और बरसीम तथा सरसों (सर्दी में) या सूडान घास (गर्मी में) इससे 3 कटाई ले सकते है और बरसीम तथा सरसों (सर्दी में) इससे 5 कटाई ले सकते हैं या संकर हाथी घास और लोबिया (गर्मी में) और बरसीम सर्दी में बुआई करें अथवा संकर हाथी घास तथा रिजका की रोपाई (बुआई) करें यदि आपके पास सिंचाई की निश्चित सुविधा है।

जरूरत से ज्यादा चारा उपजे तो उसका क्या करें ?

नवम्बर–दिसम्बर और मई–जून के महीनों में चारे की कमी रहती है। जबकि अगस्त–सितम्बर और मार्च–अप्रैल में हरे चारे की उपज जरूरत से ज्यादा हो सकती है। जिनको कमी के महीनों के लिए सुखाकर (हे बनाकर) या साइलेज (आचार की तरह) बना कर रख लें। हे बनाने के लिए बरसीम, रिजका या जई का चारा ले और साइलेज के लिए मक्का, ज्वार, जई आदि को इस्तेमाल करें।

दुधारू पशुओं को कितना चारा और दाना देना चाहिये ?

यदि हरा चारा प्रचूर मात्रा में मिले तो 8 किलो प्रति दूध उत्पादन के लिए दाने की कोई जरूरत नहीं है। 5 किलो दूध देने वाले पशु को 30–35 किलो हरा चारा और 2–3 किलो भूसा चाहियें। हरे बरसीम में भूसा मिलाकर खिलाये नहीं तो अफारा होने का डर रहता है। 8 किलो से ऊपर दूध देने वाले पशुओं को एक किलो प्रति, ढ़ाई किलो गाय के दूध के लिए तथा दो किलो भैंस के दूध के लिए देना चाहिए। गाभिन गाय भैंसों को गर्भ में बच्चे की बढ़ोत्तरी और गर्भकाल के बाद प्रचूर दूध उत्पादन के लिए अंतिम दो महीनों में अतिरिक्त दो किलो दाना देना चाहिये। काम करने वाले बैलों को 2–3 किलो और सांड को 4–5 किलो दाना प्रतिदिन देना चाहिए। 6 महीने से ऊपर के बछड़े–बछड़ियों को 10 से 15 किलो हरा चारा, 1–2 किलो दाना और 2 किलो भूसा दें।

दाना मिश्रण कैसे बनाते है ?

अच्छा पशु दाना सस्ते तथा साफ चीजों को मिलाकर बनाया जाता है। दूध देने वाले पशुओं के दानें में पाच्य प्रोटीन 15, कुल पाचनीय उर्जा 70, कच्ची प्रोटीन 20, रेशा 17, राख ज्यादा से ज्यादा 4, खनिज मिश्रण 2 एवं नमक 1 प्रतिशत होना आवश्यक है। उदाहरण के लिए मूँगफली या तील/बिनौलें/सरसों या अलसी का खल– 30–35 किलो तथा 2 किलो खनिज मिश्रण व एक किलो सादा नमक लेकर 100 किलो दाना बना लें।

हरे चारे के कमी के दिनों में पशुओं को संतुलित आहार कैसें दें ?

हरे चारे की कमी या सूखा पड़ने पर आप सूखे चारे का उपचार कर के पशुओं को खिला सकते हैं। सूखे चारे के रूप में अपने देश में अधिकतर गेहूँ का भूसा, धान का पुआल और ज्वार, बाजरा के डंठल का उपयोग होता है। इन चारों में पाचक ऊर्जा और प्रोटीन की मात्रा बहुत कम है और ये चारे पशु शरीर के बनाये रखने की क्षमता भी नहीं रखते। इसलिये इनका उपचार कर के खिलाना जरूरी है। इसके दो तरीके है –

पहली विधि – शिरा–10 किलो, यूरिया–2 किलो, खनिज मिश्रण–1 किलो, विटामिन मिश्रण–50 ग्राम लेकर 10 लीटर पानी में मिलाकर घोल तैयार करें। उसे 90 किलो सूखे चारे में अच्छी तरह मिलाकर पशुओं को खिलायें।

दूसरी विधि – यूरिया चारा किलो को 60 लिटर पानी में मिलाकर अच्छी तरह 100 किलो भूसे पर छिड़काव करें और इस चारे की 3–4 सप्ताह के लिए पोलिथिन की चादर से ढ़क कर रख दें। इसके बाद रोज खिलाने की मात्रा को निकाल कर कुछ देर के लिए खुला छोड़ दें। फिर पशुओं को खिलायें। इस तरह से उपचारित भूसों में पशु के शरीर को बनाये रखने की क्षमता होती है तथा 2–3 लिटर तक दूध भी लिया जा सकता है।

क्या पशुओं को खनिज मिश्रण और नमक खिलाना जरूरी है ?

खनिज लवणों की कमी से कई तरह की बीमारियाँ होती हैं, दूध का उत्पादन घट जाता है और प्रजनन शक्ति भी कम हो जाती है। सादा नमक तो आसानी से मिलता है और खनिज, मिश्रण भी बाजार में सुपरमिडिफ, मिक्कमैन, विटामिन, मिनमिक्स आदि नामो से मिल रहे है।

पशु को खिलाने-पिलाने में कौन-कौन सी सावधानियाँ रखें ?

(क) दाना दलिया किया हुआ होना चाहिए लेकिन बारीक पिसा हुआ न हो।

(ख) अगर चारे की फसल पर कीड़े मारने की दवाई का छिड़काव किया गया है तो उसे छिड़काव से 15 दिन बाद ही पशुओं को खिलायें।

(ग) साइलेज हमेशा दूध निकालने के बाद खिलायें। इससे दूध में साईलेज की बदबू नहीं आयेगी।

(घ) पशु के लिए साफ पानी बराबर मिलना चाहिये।

(ड) सूखा ग्रस्त ज्वार जिसकी बढ़वार 5 फुट से कम हो और पत्ते पीले रंग के हो तो पशुओं को नहीं खिलानी चाहिए। यह ज़हरीला होता है। पशुओं के रहने व चरने की जगह कोई ज़हरीला पौधा हो तो उसे काट दें।

(च) चारा दाना पशु को डालते समय ध्यान रखें कि कोई नुकिली वस्तु जैसे कील या लकड़ी का कोई टुकड़ा हो तो निकाल दें।

कुछ भ्रांतियाँ

पशुपालकों को यह सलाह दी जाती है कि ऐसा न सोचे कि बिनौला खिलाने से अधिक मक्खन निकलता है और दूध बढ़ता है। बिनौले की जगह बिनौले का खल खिलाना ज्यादा लाभप्रद है। इससे पशु को ज्यादा प्रोटीन मिलता है। इस तरह ग्वार की जगह ग्वार चूरी दाने में मिलाकर लाभप्रद है। ग्वार चूरी ग्वार से सस्ती और अधिक पौष्टिक है। किसान भाई रिजका को घोड़े का चारा मानते हैं और इसे दूध घटाने वाला भी मानते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है, पशुओं को रिजका थोड़ा-थोड़ा खिलाकर आदत डालें तो दूध नहीं घटता हैं।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. टोल-फ्री हेल्पलाईन सेवा (1800-180-1184)
3. नि:शुल्क SMS सेवा
4. पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री

   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

पशु आहार में खनिज व विटामिन का महत्त्व

सुभाशीष साहू, हरीश कुमार गुलाटी एवं देवेन्द्र सिंह बिढाण

पशु उत्पादन एवं प्रबन्धन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

खनिज क्या है ?

खनिज मिश्रण बहुत सारे रासायनिक तत्त्वों को मिलाकर बनाया जाता है जिनकी पशुओं को कम मात्रा में आवश्यकता होती है। इनका निर्माण पशु के शरीर में नहीं होता है।

विटामिन क्या है ?

विटामिन भी बहुत सारे रासायनिक तत्त्वों को मिलाकर बनाया जाता है लेकिन जुगाली करने वाले पशुओं को इनकी आवश्यकता बाहरी साधनों से देने की जरूरत नहीं हैं क्योंकि विटामिनों का निर्माण पशु के पेट में उपस्थित जीवाणुओं द्वारा होता है।

खनिजों की कमी से नुकसान

इनकी कमी या उपयुक्त अनुपात में न होने से पशु भिन्न-2 प्रकार की बीमारियों व आदतों जैसे मिट्टी, कपड़ा, कागज़ इत्यादि खाना व पेशाब पीना आदि से ग्रस्त हो जाते हैं। उत्पादन कम हो जाता है, पशु गर्मी में नहीं आते, गर्भ धारण नहीं करते हैं तथा वे बांझपन के शिकार हो जाते हैं।

कौन-कौन से खनिज तत्त्व है ?

मुख्य खनिज तत्त्व- इनकी जरूरत अधिक मात्रा में होती है जैसे कैल्शियम, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटाशियम, सल्फर व कलोरिन।

लघु खनिज तत्त्व- इनकी जरूरत कम मात्रा में होती है। लोहा, तांबा, जस्ता, कोबाल्ट, आयोडीन, मैंगनीज व सैलेनियम। इसके अलावा टीन, वैनेडियम, क्रोमियम, निकल, लैड (शीशा) आदि की भी बहुत ही कम मात्रा में आवश्यकता होती है।

खनिज तत्त्वों की कमी के कारण

गहन जुताई, अधिक फसलें लेना और अधिक उपज वाली फसलों की किस्मों के प्रचलन से मिट्टी में खनिजों की कमी निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। ऐसी जमीन से उत्पादित चारों में खनिज तत्त्वों की कमी हो जाती है। इस तरह का चारा पशुओं को खिलाने से इन तत्त्वों की कमी तथा अन्य तत्त्वों का असंतुलन हो जाता है।

खनिज तत्त्वों की कमी से पशुओं में होने वाली बीमारियाँ

- लहू-मूतना तथा जोड़ों में सूजन फास्फोरस की कमी से होता है।
- दूध ज्वर कैल्शियम की कमी से होता है।
- छोटे पशुओं में रिकेट्स व बड़ों में ओस्टोमेलाशिया कैल्शियम व फास्फोरस की कमी व अनुपात (2:1) में न होना। हड्डियाँ कमजोर व जर्जर होना, दूध उत्पादन में कमी, प्रजनन में कमी व बांझपन हो जाता है।
- गलें में गोला आयोडीन की कमी से होता है।
- कम भूख लगना कोबाल्ट व जिंक की कमी से हो सकता है।

- चमड़े का रूखापन, भेड़ों में ऊन का कड़ापन व झड़ना, पतला दस्त जस्ते की कमी के कारण हो सकता हैं।

किन-किन जिलों में किन खनिजों में कमी

- सिरसा, फतेहाबाद, हिसार- कैल्शियम, फास्फोरस, तांबा व जस्ता की कमी
- भिवानी, रोहतक, सोनीपत एवं गुड़गाँव-कैल्शियम, तांबा, जस्ता व मैंगनीज की कमी।
- कुरूक्षेत्र, यमुनानगर, पानीपत व झज्जर- कैल्शियम, फास्फोरस व जस्ता।
- फरीदाबाद-कैल्शियम, मैंगनीज व जस्ता
- महेन्द्रगढ़-कैल्शियम, फास्फोरस व तांबा
- रेवाड़ी-कैल्शियम, फास्फोरस, तांबा, जस्ता, मैंगनीज व आयरन की कमी है।

इन जिलों में खनिज तत्वों की पूर्ति के लिए क्या करें ?

क्षेत्रीय आधारित खनिज मिश्रण बनाकर पशुपालकों तक पहुँचाना अति आवश्यक है क्योंकि किसी एक तत्त्व की कमी से अन्य खनिज तत्त्वों की उपलब्धता में असंतुलन होता है और पशु अपने शरीर में इनका कुशलतापूर्वक उपयोग नहीं कर पाते।

खनिज मिश्रण की उपलब्धता कई रूपों में उपलब्ध है

- लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय द्वारा खनिज मिश्रण बनाकर किसानों के लिए उचित मूल्य पर उपलब्ध कराया जा रहा है।
- ईंट के रूप में जिसे खुर्ली में रखा जाता है। इसे पशु चाटकर अपनी आवश्यकता पूरी करता है।
- गोल आकार में इसे बाड़े में लटकाया जाता है जिसे पशु आते जाते चाट कर आवश्यकता पूरी करता है।
- पाउडर के रूप में बहुत सारी कम्पनियाँ बनाती है।
- हैफेड़ द्वारा भी बनाया जाता है।

खनिज मिश्रण कितना खिलाना चाहिए

एक साल के उम्र तक	20 से 25 ग्रा. प्रतिदिन
1-2 साल	40 से 50 ग्रा. प्रतिदिन
वयस्क पशु	60 से 70 ग्रा. प्रतिदिन
10 किलो से ज्यादा दूध देने वाले पशु को	90 से 100 ग्रा. प्रतिदिन

खनिज तत्त्वों की अधिकता से क्या होता है ?

अधिक सेलेनियम से डैगनाला नामक बीमारी हो जाती है। फ्लोरिन से पशुओं में जहरीलापन आता है तथा दाँत व हड्डियाँ कमजोर होती है।

खनिज मिश्रण खिलाने का आर्थिक पहलू

- 10 प्रतिशत तक दूध उत्पादन बढ़ जाता है।
- दुधारू पशु गर्मी में जल्दी आता है और गाभिन हो जाता है।
- दो ब्यांत का अंतराल कम जाता है।
- प्रति ब्यांत करीब 250 कि.ग्रा. दूध अधिक मिलता है।
- 300 दिनों में करीब 900 रू0 का खनिज मिलाकर 250 कि.ग्रा. अतिरिक्त दूध प्राप्त कर सकते हैं, जिसका मूल्य लगभग 5000/- रू० होगा।
- बांझपन की समस्या नहीं रहेगी।

पशुओं में अनाप्लाजमोसिस रोग

गौरी चंद्रात्रे एवं के.के. जाखड़

पशु विकृति विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

परिचय – अनाप्लाजमोसिस पशुओं में होने वाला अति संक्रामक रिकेटश्या जनित रोग है। यह रोग मुख्यत: बछड़े, दुधारू गाय एवं भैंसों में पाया जाता है। यह रोग बाह्य परजीवी के काटने से होता है और पशुओं में खून की मात्रा कम करता है। बारिश के मौसम एवं गर्मी बढ़ने से यह रोग अधिक होता है।

रोग से हानि – दुधारू पशुओं में दूध की उत्पादकता में कमी आती है। प्रजनन क्षमता में गिरावट आती है। पशुधन व्यापार पर असर पड़ता है।

कारण – अनाप्लाजमोसिस रोग एक अनाप्लाजमा मार्जिनल एवं अनाप्लोजमा सेंट्रेल नामक रिकेटशिया से होता हैं। यह रिकेटश्या लाल रक्त कणिकाओं में पाया जाता हैं।

फैलाव – यह रोग बाह्य परजीवी जैसे चिचड़िया, मक्खियाँ और मच्छरों के काटने से होता है। ये कीट पशुओं को काटते समय उनके लार में होने वाली रिकेटशिया जन्तू खून में छोड़ते हैं। जन्तू खून के लाल रक्त कणिकाओं में जाकर बढ़ते है। कभी-कभी दूषित सूई को इस्तेमाल करने से भी यह रोग फैलता है। बच्चेदानी में से होने वाले दूषित स्राव से भी यह बीमारी फैलती है।

लक्षण – शुरूआत में बुखार 1050 फ़ारेनहाइट से आगे होता हैं। पशु सुस्त हो जाता है, खाना पीना बन्द हो जाता है, दूध कम हो जाता है, वजन घटने लगता है, स्नायु थरथर होता है, दिल की धड़कन बढ़ जाती है, लाल रक्त कणिकाएँ कम होने के कारण खून पतला हो जाता हैं। पीलिया हो जाता हैं जिसमें पशु का शरीर पीला पड़ जाता हैं।

रोग का निदान – इस रोग का निदान प्रयोगशाला में खून की जाँच करवाने से होता है।

रोग का उपचार

- पशु के शरीर पर हुई चीचड़ी प्रबंधन के लिए अच्छे से अच्छे कीटनाशक का छिड़काव करें।
- अंतर परजीवी नाशक इस्तेमाल करें इससे पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
- चौगुना ऑक्सिटेट्रासायक्लिन (20 मी.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. शारीरिक भार पर) तीन दिन के अंतर से चार बार स्नायु में लगाएँ। टेट्रासायक्लिन (एल.ए.-15 मि.ली.) चमड़ी के नीचे दो दिन के अंतर से तीन से पाँच बार लगाएँ।

बचाव एवं रोकथाम

- पशुपालन में कचरे तथा गन्दगी की पूरी तरह से साफ-सफाई रखनी चाहिए।
- समय-सयम पर कीटनाशक दवाईयों का प्रयोग करना चाहिए।
- रोगी पशुओं को अलग रखना चाहिए।
- पशुओं को संतुलित एवं पूरी मात्रा में आहार प्रदान करना चाहिए जिससे पशुओं की रोगप्रतिरोधक क्षमता बनी रहे।

नवजात पशुओं में दस्तों की समस्या–निदान एवं बचाव

साक्षी चौहान[1] ,विपुल ठाकुर[2] एवं धर्मवीर सिंह दहिया[3]

[1]पशु चिकित्साधिकारी, कलीना, उत्तर प्रदेश, [2]पशु रोग जाँच प्रयोगशाला, भिवानी

[3]पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

बछड़ों में 3 माह की आयु तक दस्त होने की समस्या सबसे आम रोगों में से एक है, जिसके कारण बछड़ों की मृत्यु दर में वृ) हो जाती है, जिसके फलस्वरुप पशुपालकों को गंभीर वित्तीय नुकसान उठाना पड़ता है। बछड़ों में दस्त के कारण आंतों द्वारा तरल पदार्थो का अवशोषण असंतुलित होने से इलैक्ट्रोलाइट्स की मात्रा घट जाती है तथा बछड़ा डिहाइड्रेशन/निर्जलीकरण (पानी की कमी) एवं एसिडोसिस से ग्रस्त हो जाता है जो कि उनकी मृत्यु के मुख्य कारण होते हैं।

बछड़ों में दस्त के कारण

बछड़ों में दस्त के कारणों को दो श्रेणियों में बाँटा गया है :-

(क) असंक्रामक कारण (ख) संक्रामक कारण

(क) असंक्रामक कारण

1. **गर्भवती मादा पशु को अपर्याप्त पोषण** – गर्भावस्था के अंतिम तीन महीनों में गर्भवती मादा पशु के आहार में ऊर्जा, प्रोटीन, विटामिन–ए, विटामिन–ई एवं खनिज़ तत्त्वों की कमी से कोलोस्ट्रम की गुणवत्ता एवं मात्रा पर प्रतिकूल प्रभाव के कारण बछड़ों में दस्त की समस्या हो सकती है।
2. **नवजात बछड़ों के लिए प्रतिकूल वातावरण** – नवजात बछड़ों को भीड़–भाड़ वाले दूषित वातावरण में तथा बड़े पशुओं के साथ रखने से दस्त की समस्या हो सकती हैं। इसके अलावा अत्यधिक हिमपात, वर्षा एवं कम तापमान भी नवजात बछड़ों के लिए प्रतिकूल वातावरण स्थापित करते हैं। जिससे बछड़ों में संक्रामक रोगों एवं दस्त के होने की आशंका बढ़ जाती है।
3. **नवजात बछड़ों की अनुचित देखभाल** – प्रतिकूल वातावरण में जन्म लेने वाले बछड़ों की उचित देखभाल अत्यन्त आवश्यक है। बछड़ों को जन्म के 12 घण्टों के भीतर कम से कम शारीरिक वजन का 10 प्रतिशत कोलेस्ट्रम अवश्य पिलाना चाहिए, क्योंकि नवजात बछड़ों को दस्त करने वाले संक्रामक कारकों से बचाने के लिए एन्टीबॉडी कोलोस्ट्रम द्वारा ही प्राप्त हो पाते हैं तथा जन्म के 24 घण्टें बाद कोलोस्ट्रम पिलाना लाभकारी नहीं होता, क्योंकि बछड़ों की आंतों द्वारा एन्टीबॉडी का अवशोषण बहुत ही कम हो जाता है। बछड़ों को यदि अधिक समय तक भूखा रखा जाए अथवा नियमित समय पर दूध न पिलाया जाए, तो बछड़ें दूध मिलने पर आवश्यकता से अधिक दूध पी लेते हैं, जो ठीक से पच न पाने के कारण बछड़ों में दस्त का कारण बन जाता है। इसके अलावा मिल्क रिप्लेसर (दूध के बदले पदार्थ) को बदलने से या अच्छी गुणवत्ता वाले मिल्क रिप्लेसर की जगह खराब गुणवत्ता वाला मिल्क रिप्लेसर देना भी बछड़ों में दस्त का कारण बन सकता है।

(ख) संक्रामक कारण

जीवाणु

1. **ईसिचिरिशिया कोलाई (ई. कोलाई)** – यह मुख्यत: दूषित वातावरण द्वारा फैलता है। स्वस्थ पशुओं तथा दस्त से पीड़ित बछड़ों का गोबर ई. कोलाई का मुख्य स्रोत है। इससे होने वाले दस्त में डिहाइड्रेशन एवं मृत्यु बहुत तीव्रता से 24 घण्टों के

भीतर हो जाती है।

2. **साल्मोनेला** – साल्मोनेला का पशुगृह में संक्रमण दूसरी गाय, चिड़िया, बिल्ली, चूहे, जल-आपूर्ति या मानव वाहकों द्वारा हो सकता है। बछड़ों में दस्त के साथ खून एवं फाइब्रिन की मल में उपस्थिति, तनाव तथा बुखार इसके मुख्य लक्षण है।

3 **क्लॉसट्रीडियम परफ्रिजेन्स** – इससे होने वाले संक्रमण को एन्टरोटाक्सिमिया भी कहते हैं। इन जीवाणुओं द्वारा दस्त, मौसम में बदलाव, आहार में बदलाव तथा बछड़ों को अधिक समय तक भूखा रखने से होता है। इससे बछड़ों में कमजोरी एवं मृत्यु बहुत तीव्रता से होती है तथा मृत्यु से पूर्व पेट में दर्द तथा तंत्रिका तंत्र से संबंधित लक्षण देखे जा सकते हैं।

विषाणु

1. **रोटा वॉयरस** – यह आँत की कोशिकाओं को नुकसान पहुँचाता है। इससे होने वाले दस्त में मृत्यु मुख्यत: पानी की कमी से होती है।

2. **कोरोना वॉयरस** – यह भी आँत की कोशिकाओं को नुकसान पहुँचाता है तथा इस विषाणु के सहयोग से अन्य जीवाणु रोग कारक भी दस्त कर सकते हैं।

3. **बोवाइन वॉयरल डायरिया वॉयरस** – इस विषाणु से पीड़ित बछड़ों की जीभ-होंठ एवं मुँह में अल्सर एवं इरोजनस जैसे घाव पाये जाते हैं।

प्रोटोजोआ

1. **क्रिप्टोस्पोरिडियम** – यह प्रोटोजोआ स्वयं या अन्य कारकों जैसे कोरोना वायरस, रोटा वायरस तथा ई. कोलाई के साथ दस्त की समस्या का कारण बनता है। इससे पीड़ित बछड़ों की आयु 1-3 हफ्तों के मध्य ही होती है।

2. **कॉक्सिडिया** – एक हफ्ते से 4-6 माह तक की आयु के बछड़ों में कॉक्सिडिया की समस्या अधिक होती है। यह रोग दूषित एवं भीड़-भाड़ वाले वातावरण में अधिक होता है। बछड़ों में काले रंग का गोबर, खूनी दस्त तथा कभी-कभी तंत्रिका तंत्र से संबंधित लक्षण देखे जा सकते हैं।

3. **कवक एवं खमीर** – कवक एवं खमीर भी कभी-कभी बछड़ों के आमाश्य एवं आंतों में घाव उत्पन्न करते हैं, परन्तु यह दस्त के मुख्य कारक नहीं होते हैं। यदि दस्त से पीड़ित बछड़ों को आवश्यकता से अधिक ऐन्टीबॉयोटिक दिया जाये तथा पानी की कमी दूर करने के लिए तरल पदार्थ एवं इलैक्ट्रोलाइट ना दिये जाये तो कवक एवं खमीर के दस्त उत्पन्न करने की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।

निदान

1. बाड़ें में पूर्व समय में हुए दस्त के कारणों की जानकारी द्वारा हम दस्त के कारणों का अनुमान लगा सकते हैं।

2. लक्षणों की जानकारी द्वारा

   (क) सामान्य लक्षण – बछड़ों का सुस्त होना, भूख न लगना एवं खाना-पीना कम कर देना, दस्त होना, त्वचा के लचीलेपन का कम होना तथा सामान्य से कम या अधिक तापमान होना सामान्य लक्षण होते हैं।

   (ख) विशिष्ट लक्षण – ई. कोलाई के संक्रमण से सफेद दस्त होते हैं एवं कभी-कभी खून के थक्के भी आते हैं। साल्मोनेला के संक्रमण से गहरे भूरे रंग के पानी जैसे बदबूदार दस्त होते हैं। क्लॉस्ट्रिडियम के संक्रमण से तंत्रिका तंत्र से संबंधित लक्षण दिखाई दे सकते हैं तथा बछड़ा अपने पेट पर लातें मारता है, परन्तु सामान्यत: बिना लक्षणों की उपस्थिति के ही बछड़ों की मृत्यु हो जाती है। रोटा वॉयरस के संक्रमण में पीले से हरे रंग के पानी के दस्त होते हैं एवं मुँह से थूक निकलता है। कोरोना वॉयरस के संक्रमण से भी दस्त रोटा वॉयरस जैसे ही होते हैं, लेकिन गोबर

में अण्डें के सफेद भाग की तरह का म्यूक्स पदार्थ आता है। प्रोटोजोआ से होने वाले दस्त में खून की उपस्थिति सामान्य होती है।

3. **प्रयोगशाला जाँच द्वारा** – जीवित पशु के मल, खून एवं सीरम तथा मृत पशु के यकृत, स्पलीन, मस्तिष्क, गुर्दे एवं आँत की लसिका ग्रन्थि की जाँच द्वारा रोग कारक का पता लगाया जा सकता है, मल पदार्थ के कल्चर द्वारा जीवाणु को अलग किया जा सकता है तथा इसके लिए विशेष मीडिया प्रयोग किये जाते हैं, कोशिकाओं में कल्चर से विषाणु को भी पहचाना जा सकता है, इसके अलावा एलीसा, आई.एच.टी., सी.एफ.टी. एवं फैट तकनीक द्वारा भी दस्त के कारक की जाँच की जा सकती है।

उपचार

दस्त के उपचार के लिए लूड थेरेपी प्रयोग करनी चाहिए एवं निर्जलीकरण को दूर करने के लिए मुँह द्वारा तथा नसों द्वारा तरल पदार्थ देना चाहिए, ऐन्टीबॉयोटिक का प्रयोग भी आवश्यक है, केओलिन-पेक्टिन एवं विस्मिथ लवण जैसे पदार्थ भी देने चाहिए। एस्ट्रिनजेन्ट का प्रयोग भी दस्त रोकने में बहुत प्रभावकारी होता है। प्रोबॉयोटिक देने से भी दस्त से पीड़ित बछड़ें की स्थिति में सुधार होता है। दस्त से पीड़ित बछड़ों में शरीर का तापमान कम हो जाता है, अत: तापमान को संतुलित रखने के लिए इलैक्ट्रिक हीटर का प्रयोग किया जा सकता है।

रोकथाम एवं बचाव

बछड़ों में दस्त के रोकथाम एवं बचाव के लिए पूरे साल प्रयास करना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर हम बछड़ों का दस्त से बचाव कर सकते हैं –

गर्भवती पशु को ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज एवं विटामिन से भरपूर संतुलित आहार देना चाहिए। बछड़ें के जन्म के समय बाड़ा सूखा एवं साफ होना चाहिए। बाड़ें में गोबर इकट्ठा नहीं रहना चाहिए। पशुओं के खाने-पीने के बर्तन साफ होने चाहिए। बाड़ें में हवा के आने-जाने का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। बछड़ों में दस्त होने की स्थिति में उनके बाड़ों को रोगाणुनाशक पदार्थों से साफ करना चाहिए एवं बछड़ों को नये साफ बाड़ें में रखना चाहिए। बाड़ें में बछड़ों की संख्या सीमित रखनी चाहिए। बछड़ों के बेडिंग को भी बदल देना चाहिए या धूप में अच्छे से सुखाना चाहिए। बाड़ें में पक्षियों, चूहों तथा पालतू पशुओं की आवाजाही को नियंत्रित रखना चाहिए। बछड़ों की देख-रेख करने वाले कर्मचारियों को भी अपनी स्वच्छता का भी ध्यान रखना चाहिए तथा हाथों को साबुन से धोकर ही बछड़ों को पानी व भोजन देना चाहिए। बाड़ें में प्रवेश द्वार पर चूना डाल देना चाहिए। बाड़ें का फर्श ढ़लान वाला होना चाहिए ताकि पानी इकट्ठा न हो सकें।

बीमार बछड़ों को अलग बाड़ें में रखकर उनका उपचार करना चाहिए। बाड़ें में नए बछड़ों को लाने से पहले उन्हें कुछ समय अलग रखना चाहिए। बछड़ों को जन्म के 12 घण्टें के भीतर कोलोस्ट्रम/खींस अवश्य पिलाना चाहिए। यदि बछड़ें की माँ थनैला या किसी अन्य रोग से पीड़ित हो, तो बछड़ों को बाजार में उपलब्ध फ्रोजन कोलोस्ट्रम भी दिया जा सकता है। नवजात बछड़ों को 50,000 आई.यू. विटामिन-ए का इन्जेक्शन लगाना चाहिए, जिससे विटामिन-ए की कमी से होने वाले दस्त से बचा जा सकें। ई. कोलाई से बचाव के लिए के. 99 ई. कोलस्ट्रम एन्टीजन वाला टीका भी प्रयोग किया जा सकता है। उपर्युक्त वर्णित लक्षणों की सही समय पर पहचान द्वारा एवं बताई गयी सावधानियों को अपनाकर, नवजात पशुओं का दस्तों से बचाव किया जा सकता है।

पशुओं में गलघोंटू : एक जानलेवा छूत रोग

राजेश सिंगाठिया एवं सुनील कुमार तमोली

पशु चिकित्सा विश्वविद्यालय प्रशिक्षण एंव अनुसंधान केन्द्र, चूरु

राजस्थान पशु चिकित्सा एंव पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर।

इस रोग को गलघोंटू के अतिरक्त घूर्रका रोग /घोटूला /हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया भी कहते हैं। यह रोग मुख्यत: गाय, भैंस, भेड., बकरी, ऊँट, शूकर व अन्य प्रजातियों के पशुओं में होने वाली अतिव्यापी छूतदार बीमारी हैं, जो बहुत ही कम समय में बहुत ज्यादा पशुओं को प्रभावित करने की क्षमता रखता हैं। देशभर में हर वर्ष 40,000 से अधिक जानवर इस रोग के शिकार हो जाते है और उन में से अधिकांश की मृत्यु हो जाती है। सामान्यता यह पाया गया है कि अन्य रोग जैसे मुँहपका-खुरपका से प्रभावित पशुओं में यह रोग ज्यादा खतरनाक साबित होता हैं।

रोग का कारण - यह रोग पाश्चुरेला जीवाणु से होता है जो कि पशु के शरीर (श्वसन तन्त्र) में ही रहता है और जब पशुओं में किसी वजह से (ज्यादा कार्य करने से, ज्यादा पैदल चलने से, ज्यादा बोझा ढोने से, भूखा रहने से, मौसम में आए अचानक बदलाव से, पशुओं को बिना चारे व पानी के एक स्थान से दूसरे स्थान पर वाहन इत्यादि से काफी दूरी तक ले जाने से) तनाव की स्थिती उत्पन्न हो जाती है तब यह जीवाणु पशु के शरीर में संक्रमण करता हैं।

रोग का फैलाव - यह रोग वर्षा ऋतु (जुलाई -सितम्बर) आने पर शुरू होता हैं। यह बीमारी उन स्थानों पर अधिक होती है जहाँ बारिश का पानी इकट्ठा हो जाता हैं। यह रोग स्वस्थ पशु के बीमार पशु के सम्पर्क में आने से, बीमार पशु के जूठे चारे, दाने व पानी के सेवन से, रोगी पशु के बिछावन के सम्पर्क में आने से तथा हवा के माध्यम से फैलता हैं।

रोग के लक्षण - पशुपालक इस रोग को निम्नलिखित लक्षणों के आधार पर आसानी से पहचान सकते हैं :

- बीमार पशु को अचानक तेज बुखार (106-107^0 फारनेहाइट) हो जाता है और वह काँपने लग जाता हैं।
- पशु सुस्त हो जाता है, चारा खाना बन्द कर देता है और अचानक दूध का उत्पादन घट जाता हैं।
- आँखे लाल हो जाती है एवं सूज जाती है।
- नाक, आँख एवं मुहँ से स्राव शुरू हो जाता हैं।
- पशु के गले, सिर, गर्दन, जीभ व निचले जबड़े के बीच कष्ठदायक कठोर सूजन आ जाती हैं। गले की सूजन 2-4 घण्टें उपरान्त बहुत तेजी से बढ़ती हैं तथा पशु को साँस लेने में परेशानी होती है और साँस लेते समय घुर्र-घुर्र की आवाज आती है (इसी कारण इस रोग कों घूर्रकारोग कहते है) तथा साथ-साथ बेचैनी अधिक बढ़ जाती है और 12-24 घण्टें के अन्दर ही साँस लेने में कठिनाई के कारण दम घुटने से पशु की मृत्यु हो जाती है। छोटी उम्र के पशु में कई बार बिना लक्षण आये ही पशु की मौत हो जाती हैं।

रोग का निदान - रोग के इतिहास, क्लीनिकल लक्षण और प्रयोगशाला में पाश्चुरेला जीवाणु के पृथ्थकरण (आइसोलेसन) पर रोग का निदान तय किया जाना चाहिए।

रोग का उपचार

- रोगी पशु का तुरन्त ईलाज जरूरी है अन्यथा पशु की मृत्यु संभव है।
- यह एक खतरनाक बीमारी है अत: रोग की सूचना तत्काल निकटतम पशुचिकित्सालय में दें एवं उपचार और परामर्श के लिए पशुचिकित्सक से सलाह लेनी चाहिए।

- बीमार पशु को 3–5 दिन तक सल्फाडीमीडीन (130–150 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शरीर भार, अन्तः शिराओं में), एनालजीन (40 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शरीर भार, माँसपेशियों में), डॉ यूरेटिक्स जैसे फरुसेमाईड (3–5 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शरीर भार) देना चाहिए ।

रोग से बचाव व रोकथाम – यदि किसी क्षेत्र में गलघोंटू फैल रहा हो तो निम्न उपाय करने चाहिए –

- बीमार पशु को लक्षण देखते ही अन्य स्वस्थ पशुओं से अलग कर देना चाहिये तथा बीमार पशु के प्रयोग में आने वाले बर्तनों को स्वस्थ पशुओं के प्रयोग में न लाए।
- रोगी पशु को नदी, तालाब, पोखर आदि में पानी नहीं पीने दें।
- स्वस्थ पशुओं को चारा, दाना व पानी आदि रोगी पशु से पहले दें।
- जिस स्थान पर रोगी पशु बंधा हो उस जगह के फर्श, दीवारों आदि को 3 प्रतिशत कास्टिक सोडा या 5 प्रतिशत फिनायल के घोल से साफ करना चाहिए। रोगी पशु के मल–मूत्र बिछावन आदि को चूने के साथ गड्डे में डालकर जलाना चाहिए।
- बीमारी से मृत्यु पशु के शव का निस्तारण वैज्ञानिक तरीके से गहरा खड्डा खोदकर नमक/चूना डालकर अथवा जलाकर करना चाहिए।
- रोगी पशुओं के सम्पर्क में आये हुए पशुओं को 15–20 मि.ली. एन्टीसीरम को अन्तः त्वचा (सबक्युटेनियस) विधि से देना चाहिए।
- स्वस्थ पशुओं में टीके लगवाने का शीघ्र प्रबन्ध करना चाहिए।
- प्रतिवर्ष बरसात आने से पहले सब पशुओं को सामूहिक रूप से गलघोंटू का टीका अवश्य लगवाना चाहिए। इस टीके का असर 6 माह तक रहता हैं।
- पशुओं को लम्बी यात्रा से पूर्व भी टीका अवश्य लगवायें।

पशुओं में क्षय रोग : ट्यूबरकुलोसिस

विपुल ठाकुर[1], साक्षी चौहान[2] एवं धर्मवीर सिंह दहिया[3]

[1]पशु रोग जाँच प्रयोगशाला, भिवानी [2]पशु चिकित्साधिकारी, कलीना, उत्तर प्रदेश।

[3]पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

ट्यूबरकुलोसिस अर्थात् क्षय रोग मवेशियों एवं पालतु पशुओं को प्रभावित करने वाली जटिल बीमारी है। यह रोग न केवल गाय, भैंस, बकरी, सूअर को प्रभावित करता है अपितु यह संक्रामक रोग पशुओं से मुख्यत: गायों व भैंसों से मनुष्यों में भी फैलता है। घोड़ों व भेड़ों में इस रोग के प्रति अन्य पशुओं की तुलना में सहनशीलता अधिक होती है।

रोग का कारण व संक्रमण

क्षय रोग एक जीवाणु जनित रोग है-जो कि माईक्रोबैक्टिरियम बोविस के नाम से जाना जात है। यह रोग संक्रमित पशु की साँस, थूक (बलगम), पेशाब, दूध व प्रजनन तंत्र के अंगों से होने वाले स्राव के माध्यम से, इनकें संपर्क में आने के कारण दूसरे पशुओं एवं मनुष्यों में फैलता है। प्राय: संक्रमित पशु रोग के लक्षण उत्पन्न होने से पूर्व ही जीवाणु का प्रसार पर्यावरण में व अन्य पशुओं में करने लगते हैं। जंगली पशु भी इस जीवाणु के वाहक की भूमिका निभाते हैं। साँस के द्वारा या खाँसी, छिंक के दौरान उत्पन्न महीन बूंदे/फुवार इस रोग के जीवाणु के फैलने का मुख्य कारण हैं। इसके अलावा संक्रमित गोबर, पेशाब से संक्रमित चारा, पानी आदि भी रोग का प्रसार करते हैं।

कृत्रिम गर्भाधान में प्रयुक्त होने वाला वीर्य/बीज यदि क्षय रोग से ग्रसित नर का हो या कृत्रिम गर्भाधान में प्रयुक्त होने वाले उपकरण नली आदि यदि संक्रमित पशु में प्रयोग किये गये हो तो भी क्षय रोग का संक्रमण हो जाता है।

पशुशाला में पशुओं की संख्या अधिक होने अर्थात घनत्व अधिक होने पर रोग की संभावना अधिक हो जाती है क्योंकि इन परिस्थितियों में स्वस्थ पशुओं के बीमार पशु के संपर्क में आने की संभावना अधिक होती है। इसी प्रकार खुले मैदानों में चरने वाले मवेशियों में संक्रमण की संभावना कम होती है क्योंकि खुले में रहने वाले मवेशियों की एक दूसरे की संपर्क में आने की संभावना कम ही होती है। देशी नस्लों की गायों में विदेशी नस्लों की गायों की तुलना में रोग होने की संभावाना कम होती है। उम्र के साथ-साथ रोग होने की संभावना बढ़ती जाती है।

सूअर में रोग होने की संभावना उन स्थानों पर अधिक होती है जहाँ गोवंशीय/महिषवंशीय पशुओं की जनसंख्या प्राय: ज्यादा प्रभावित होती है क्योंकि सूअर में यह जीवाणु सामान्यत: संक्रमित पशु के दूध, माँस आदि से बने खाद्य पदार्थो के सेवन द्वारा होता है या उन चारागाहों पर चरने पर संक्रमण के अवसर बढ़ जाते हैं जिन पर गोवंशीय/महिषवंशीय पशु भी साथ साथ चरते है क्योंकि संक्रमित मवेशियों के मल-मूत्र आदि स्रावों से घास आदि संक्रमित हो जाते है तथा अन्य पशुओं में जीवाणु/बीमारी के प्रसार के कारण बनते हैं।

बकरियाँ रोग के प्रति काफी संवेदनशील होती है तथा इनमें रोग होने की संभावना काफी अधिक होती है। भेड़ों को प्राय: अधिक सहनशील माना गया है किंतु जिन स्थानों पर गोवंशीय/ महिषवंशीय मवेशियों की जनसंख्या अधिक होती है, वहॉ भेड़ों में भी रोग अधिक पाया जाता है।

घोड़ों में भी बीमारी कम ही देखने को मिलती है। नमी वाली पशुशालाओं में जहाँ धूप कम आती है, बिछावन गीली होती है तथा हवा आर-पार नहीं हो पाती ऐसी पशुशाला में पलने वाले पशुओं में रोग से ग्रसित होने की संभावना अधिक होती है। मनुष्यों में भी यह रोग मुख्यत: साँस के माध्यम से या संक्रमित कच्चा दूध पीने से अधिक होता है।

रोग के लक्षण

रोग से ग्रसित पशु का वजन तेजी से कम होने लगता है, पशु को भूख बहुत अधिक लगती है। पशु का तापमान सामान्य न होकर परिवर्तित होता रहता है, सामान्यत: पशु को बुखार बना रहता है। इसी लक्षण के कारण क्षय रोग को तपेदिक भी कहा जाता है। प्रभावित मवेशी सुस्त रहने लगता है अपितु आँखें चमकदार बनी रहती हैं।

फेफड़ों में संक्रमण के दुष्प्रभाव के कारण पशु को खाँसी हो जाती है, जो सामान्यत: प्रयुक्त होने वाली दवाइयों से ठीक नहीं हो पाती तथा लंबे समय तक बनी रहती है। धीरे-धीरे फेफड़े नष्ट होने लगते हैं, जिसके फलस्वरूप पशु को साँस लेने में अत्याधिक कठिनाई होने लगती है। फेफड़ों की झिल्ली आवरण को बनाने वाली परत में भी सूजन आ जाती है तथा फेफड़ों के चारों और पानी भरने लगता है। साँस की नलियों की लिम्फनोडस् की सूजन के कारण साँस की नलिया व दबाव के कारण भोजन नलिका भी अवरूद्ध हो जाती है जिससे गैस जमा होने के कारण पेट फूलने लगता है (अफारा हो जाता है)। यदि आँतों में भी संक्रमण हो जाता है तो पशु को भूख कम लगने लगती है तथा आंतों में अल्सर बन जाता है। यह जीवाणु थनों को भी प्रभावित करता है। इसके कारण थन बड़े हो जाते है तथा थनों में ऊपर की तरफ गांठे बनने लगती है। सूअर में गर्दन की लिम्फनोडस् में संक्रमण प्राय: कोई लक्षण पैदा नहीं करता। सूअर में सिर की या मस्तिष्क के जोड़ों की टी0 बी0 अधिक सामान्य है।

घोड़ों में भी यह जीवाणु गर्दन की लिम्नोडस् को अधिक प्रभावित करता है। गर्दन में सूजन, अकड़न व जमीन से घास न चर पाना आम लक्षण हैं अपितु खाँसी व नाक से पानी बहना कम ही देखने को मिलता है।

भेड़-बकरियों में सामान्यत: निमोनिया देखने को मिलता है जो कि खाँसी व साँस लेने में तकलीफ से आसानी से पहुँचाया जा सकता है। कभी-कभी बकरियों में आँतों का संक्रमण होने के कारण अल्सर हो जाते हैं तथा दस्तों की समस्या भी हो जाती है। वयस्क बकरियों में रोग धीरे-धीरे फैलता/पनपता है अपितु बच्चों में यह अत्यंत तेजी से फैलता है।

रोग का निदान

- बलगम की जाँच द्वारा तथा बीमारी को करने वाले जीवाणु की पहचान द्वारा।
- रोग के लक्षणों द्वारा भी रोग की पहचान हो सकती है।
- शव परीक्षण करने पर गायें, भैंस, भेड़ व बकरियों के फेफड़ों व प्रभावित अंगों में गांठें मिलती हैं। इन गांठों में मवाद क्रीम जैसे या केसरिया रंग का होता है एवं क्रीम या पनीर की भाँति होता है। आँतों में भी गांठें मिलने की संभावना होती है।
- ट्यूबरकुलिन टेस्ट - इस टेस्ट के विभिन्न प्रारूप होते है। साधारणत: ट्यूबटकुलिन द्रव्य को गर्दन पर त्वचा/खाल में लगाया जाता है। यदि 48-72 घंटे के भीतर उस स्थान पर गर्म दर्द वाली सूजन आ जाती है तो पशु को क्षय रोग से ग्रसित मान लिया जाता है। इस टेस्ट का दूसरा प्रारूप स्टोरमान्ट टेस्ट है, इसमें गर्दन में खाल में पहले टीके के सात दिन के अन्दर सामान्यत: पहले टीके के 48 घंटे बाद दूसरा इंजेक्शन दिया जाता है। यदि 24 घंटे के अंदर त्वचा की मोटाई 5 मी. मी. से अधिक की वृद्धि होती है तो उसे तपेदिक रोग से ग्रसित पशु मान लिया जाता है। इसके अलावा एलीसा, पी. सी. आर. जैसी तकनीकों से भी रोग की पहचान की जा सकती है।

रोग के नियंत्रण एवं बचाव के उपाय

प्राय: विकसित देशों में इस बीमारी के उन्मूलन के लिए वध विधि का प्रयोग किया जाता है, अपितु भारतीय परिवेश में गोवंशीय पशुओं का वध प्रतिबंधित है, अत: क्षय रोग से ग्रसित पशुओं को अन्य पशुओं से दूर अलग बाड़े में रखना चाहिये।

क्षय रोग की चिकित्सा मानवों की भांति पशुओं में भी लम्बे समय तक चलती है जो कि व्यवहारिक नहीं है। पशुओं में भी आईसोनिकोटिनिक एसिड (आईसोनियाज़िड एवं पैरा-अमिनोसैलीसाइकिलिक एसिड) के प्रयोग द्वारा किया जा सकता है। स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट का प्रयोग भी लाभकारी परिणाम देता है। आइसोनियाजिड 5 मि. ग्रा. प्रति किलों वजन की दर डेढ़ माह के लगातार प्रयोग पर

अच्छे परिणाम देता है। विषम परिस्थितियों में 10 –12 माह तक 10 मि. ग्रा. प्रति किलों वजन की दर से इसका प्रयोग करना होता है, जिससे दूध के माध्यम से जीवाणु का प्रसार रोका जा सकता है।

बकरियों में 300 मि. ग्रा. रिफैमपीन एवं 300 मि. ग्रा. आइसोनियाजिड मुख द्वारा तथा साथ में 500 मि. ग्रा. स्ट्रप्टोमाइसिन का माँसपेशियों में टीके द्वारा प्रयोग चिकित्सा में अत्यंत सहायक है। समय-समय पर (वर्ष में दो बार) ट्यूबरकुलिन टेस्ट द्वारा जाँच करनी चाहिये तथा संक्रमित पशुओं का वध कर देना चाहिए या कम से कम उन्हें अन्य पशुओं से दूर अलग कर देना चाहिये। मृत पशुओं को जला देना चाहिये या गड्ढ़े में चूना डालकर दफना देना चाहिए। क्षय रोग ग्रसित पशु के संपर्क में आने वाले पशु पर कड़ी निगरानी रखनी चाहिये तथा उनकी भी उचित जाँच होनी चाहिये।

बी. सी. जी. का टीकाकरण किया जा सकता है किंतु यह रोग से पूर्ण रूप से बचाव करने में सक्षम नहीं होता है। नये पशुओं को पशुशाला में टेस्ट करने के पश्चात् ही लाना चाहिये। पशुपालकों की भी नियमित जाँच होनी चाहिये। पशुशाला हवादार होनी चाहिए जिसमे धूप आती हो तथा बाड़े में अधिक भीड़ नहीं होनी चाहिए।

उपर्युक्त वर्णित बातों का अनुसरण कर किसान भाई/पशुपालक क्षय रोग से अपने पशुओं एवं स्वयं तथा अपने परिवार का बचाव कर सकते हैं व रोग के नियंत्रण में सहायता कर सकते हैं।

पशुओं में मुख्य खाद्यजन्य विषाक्तता तथा बचाव के उपाय

ओ.पी. महला[1] एवं वन्दना भनोट[2]

[1]पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला [2]पशु रोग शोध प्रयोगशाला, अम्बाला

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

पशुपालन व्यवसाय में पशु आहार पर 70 प्रतिशत से अधिक व्यय होने के कारण सस्ते तथा संतुलित आहार का अत्याधिक एवं विशेष महत्त्व है। पशु आहार को सस्ता व पौष्टिक बनाने में हरे चारे का महत्त्वपूर्ण योगदान है, क्योंकि हरे चारे में सभी पोषक तत्त्व मौजूद होते हैं तथा जल्दी हज़म हो जाता है और सस्ता पड़ता है। वर्तमान काल में देश के कई हिस्सों में भी भीषण सूखे की स्थिति के कारण फसलों में चारे की फसलों की उपलब्धता बहुत कम है। चारे की फसलों की बिजाई के बाद पानी की कमी के कारण इन फसलों की बढ़वार रूक जाती है तथा मुरझा कर सूखने लगते है। इस तरह के मुरझाहट तथा अविकसित चारे के पौधों में लगभग 30-35 दिन तक की अवस्था में विषाक्त तत्त्वों की मात्रा बढ़ जाती है, जिनके सेवन से पशुओं में खाद्यजन्य विषाक्तता हो जाती है। पशुओं में खाद्यजन्य विषाक्तता कई कारणों से हो सकती हैं जिनका विवरण निम्नलिखित हैं :

1. **सायनाइड विषाक्तता** - प्रकृति में कई प्रकार के पेड़ पौधे होते हैं जिनमें रसायनों जेनिक ग्लुकोसाईड होते हैं। ऐसे पेड़-पौधे को खाने पर इनमें मौजूद ग्लुकोसाइडस पशु के रूमेन में एन्जाइम की क्रियाओं से हाईडोसायनिक अम्ल निकलता है जो विषाक्त होता है। प्रकृति में ऐसे कई पौधे व चारे हैं जिनके सेवन से सायनाइड विषाक्तता हो सकती है, लेकिन सायनाइड की मात्रा विभिन्न मौसमों एवं पौधों के भागों में अलग-अलग होती है। इस तरह के चारे में विशेषत: ज्वार, बाजरा, सूडान घास व चरी आदि के सेवन से कभी-कभी विशेषत: सूखे की स्थिति में सायनाइड जनिक ग्लुकोसाइड की मात्रा अधिक होने के कारण पशुओं की मृत्यु हो जाती है। सायनाइड विषाक्तता में ऑक्सीजन के वाहक इन्जाईम प्रभावित हो जाने के कारण शरीर के उत्तकों में ऑक्सीजन नहीं पहुँच पाने के कारण दम घुटने से पशु मर जाता है। ऐसा जिन पौधौं पर प्लांट हॉरमोन का छिड़काव होता है उनके खाने से भी हो सकता है। सायनाइड युक्त चारे के अधिक मात्रा में सेवन करने के 15-20 मिनट बाद ही पशु में विषाक्तता के लक्षण आ जाते है। पशु मुँह खोल कर साँस लेना शुरू कर देता है। पशु के मुँह से लार गिरनी शुरू हो जाती है। पशु बेचैन हो जाता है और अपने सिर को पेट की और घूमा कर रखता है। पशु का खून चमकीला लाल हो जाता है। मौत के समय दम घुटने जैसी पीड़ा होती है।

बचाव

- अच्छी सिंचित की गई ज्वार, बाजरा, चरी व सुडान घास हो पशुओं को हरे-चारे के रूप में खिलाएँ। 2-3 बार अच्छी वर्षा होने के उपरान्त ज्वार या चरी की फसल को पशुओं को खिलाएँ।
- चारागाहों में चराने के लिए ले गये पशुओं को कम बढ़ी हुई तथा मुरझाए पीले पत्तों वाली ज्वार व बाजरे की चारे की फसल न खाने दें।
- सायनाइड ग्रस्त चारा खाये हुए पशु को पानी नहीं पिलाना चाहिये।

उपचार

- सायनाइड विषाक्तता के लक्षण प्रकट होते ही पशु को सोडियम नाईटाइट 3 ग्राम तथा सोडियम बॉयोसल्फेट 15 ग्राम, 200 मि.ली. डिस्टिल्ड पानी में घोलकर नस में पशुचिकित्सक की देख-रेख में देना चाहिये।
- सोडियम बॉयोसल्फेट 40-50 ग्राम मुँह से देना चाहिये।

2. नाईट्रेट व नाईट्राइट विषाक्तता – नाईट्रेट तत्त्व कई प्रकार दलहनी फसलों तथा गहरे कुओं के पानी में विशेष तौर से पाये जाते हैं। नाईट्रेट विषाक्तता अधिक नाइट्रेट वाले चारे व पानी के सेवन करने से होती है। जब यूरिया खाद हरे चारे की मक्का, जई आदि फसलों में नाइट्रेट की मात्रा बढ़ जाती है तथा कारखानों से निकलने वाले विशेष रसायनों से दूषित मिट्टी पानी में भी नाईट्रेट की मात्रा अधिक होती है तो जो नाईट्रेट विषाक्तता का कारण बनती है। नाईट्रेट स्वयं में विषैला नहीं होता परन्तु उच्च नाईट्रेट चारे, पानी के ज्यादा मात्रा में सेवन करने से पशु के पेट में वह चारा नाईट्रेट में परिवर्तित हो जाता है जो बहुत अधिक विकसित होता है तथा पशु की मौत का कारण बनता है। शुष्क आधार पर चारे में 0.45 प्रतिशत से अधिक तथा पानी 300 पी.पी.एम. से अधिक नाईट्रेट की मात्रा विकसित होती है। नाईट्रेट विषाक्तता होने पर पशु की नाड़ी की गति व श्वसन दर बढ़ जाती हैं। पशुओं में ऑक्सीजन की कमी के कारण साँस लेने में कठिनाई होती है तथा मुँह खोल के साँस लेते हैं। ऑक्सीजन की कमी के कारण पशुओं की आँख, नाक व मुँह की झिल्ली गहरे रंग की हो जाती है। पशु का शरीर धनुष के आकार का हो जाता है। पशुओं में गर्भपात हो जाता है। पशु को उल्टी व दस्त हो जाते है। शरीर की म्युक्स मेम्बेन नीली हो जाती है। पशु में नाईट्रेट की विषाक्तता के लक्षण प्रकट होने के एक या दो घंटे में मृत्यु हो जाती है।

बचाव

- यूरिया खाद के थैले पशुओं की पहुँच से दूर रखें।
- नाईट्रेट युक्त चारे की मात्रा थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर खिलानी चाहिये।

उपचार

- मेथिलीन ब्लु के एक प्रतिशत घोल की आवश्यकता अनुसार 50-100 मि.ली. सीधे नस में पशु चिकित्सक की देख-रेख में दें।

3. एफलाटॉक्सिकोसिस – हमारे देश में पशुओं को बचा हुआ गला-सड़ा खाना देना तथा फफूँद लगी वस्तु खिलाना एक आम बात है। वैज्ञानिकों के अनुसार ये फफूँद माईकोटोक्सिन नामक विषैला पदार्थ पैदा करता हैं जो मनुष्यों व पशुओं के लिए बहुत हानिकारक हैं। पर्जीलस ऐस नामक फफूँद से विषैला पदार्थ एफलाटोक्सिन उत्पन्न होता है। सोयाबिन, मूँगफली, बिनौले आदि के दानों में फफूँद द्वारा एफलाटोक्सिन जल्दी बनता है। इसकी मात्रा कई बार मौसम में आई नमी व बरसात के कारण होता है। सभी प्रकार के पशु एफलाटोक्सिन से प्रभावित हो सकते हैं। यह शरीर में प्रवेश कर पशु के लीवर को सबसे ज्यादा हानि पहुँचाता है। जिससे पशु की मृत्यु भी हो जाती है।

इसके लक्षण भूख कम लगना, दूध उत्पादन कम होना पशु का सुस्त रहना, खूनी दस्त लगना, कमजोर होना, पीलिया होना तथा अन्धापन होना व गोलदायरे में चक्कर काटना आदि।

बचाव

- ऐफलाटोक्सिन का पूरी तरह खत्म करना असम्भव है। परन्तु दाने में इसका स्तर 300 पी.पी.एम. ऊपर पहुँचने पर नुकसानदायक है।
- पशु को आहार, लैब में परीक्षण करवाने के बाद दें।
- पशु दाना का भण्डारण वैज्ञानिक ढंग से करें।
- बरसात के मौसम व बदलते मौसम में आहार पर विशेष ध्यान रखें।
- समय-समय पर पशु दाने की गुणवत्ता की जाँच करवाएँ।
- पशु आहार/दानें में एन्टीफंगल एजेन्ट व गोवर टोनिक मिलाएँ।
- दानें के घटकों को दो-तीन दिन तेज धूप में सुखाएँ।
- दाना या पशु आहार अधिक समय के लिए इक्ट्ठा ना करें।

सूकर पालन देखभाल एवं प्रबन्धन

सुभाशीष साहू, विशाल शर्मा एवं देवेन्द्र सिंह बिढाण

पशु उत्पादन एवं प्रबन्धन विभाग,

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

सूकर पालन व्यवसाय शीघ्र एवं अच्छी आमदनी देने वाले व्यवसायों में से एक है क्योंकि पालतू पशुओं की तुलना में सूकरों में सन्तानोत्पत्ति की क्षमता सबसे अधिक होती है। सूकर एक ब्यांत में 6 से 12 बच्चे देते हैं, जो कि मात्र 6-8 माह में लगभग 60 कि. ग्रा. शरीर भार ग्रहण कर लेते हैं। उनके मल से बनने वाली खाद भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है तथा मछली पालने वाले तालाबों में शैवाल उत्पादन में सहयोगी होती है। सूकरों में खाद्य-पदार्थों को माँस में बदलने की क्षमता भी अधिक होती है। ये प्राय: 4.0-4.5 कि. ग्रा. खाद्य-पदार्थ को एक कि. ग्रा. माँस में परिवर्तित कर सकते हैं। किसानों को उपलब्ध संसाधनों के अनुसार ही पाले जाने वाले सूकरों की संख्या निर्धारित करनी चाहिए। सामान्यत: एक किसान के लिए 10 मादा तथा 2 नर सूकरों से व्यवसाय आरम्भ करना उत्तम होता है। नया सूकर फार्म खोलने के लिए वयस्क नर एवं मादा सूकर से शुरूआत करना श्रेयस्कर होता है।

नस्ल का चुनाव

सूकर पालन व्यवसाय की सफलता के लिए नस्ल का चयन एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है। हमारे देश में क्षेत्रीय प्रजातियों के संकरण के उपरान्त उच्चकोटि के नस्ल तथा कुछ विदेशी नस्लों के सूकर उपलब्ध हैं। विदेशी नस्लों में यॉर्कशायर, लैण्डरेस, बर्कशायर इत्यादि ज्यादा प्रचलित हैं, लेकिन ध्यान रहे, नस्लों का चयन भौगोलिक क्षेत्र के अनुसार किया जाना चाहिए। सूकर पालन व्यवसाय के लिए मिडिल व्हाइट यॉर्कशायर नामक नस्ल अच्छी होती है।

सामान्य रख-रखाव

नर सूकर - प्रजनक नर सूकर को रखने के लिए बाड़े में सामान्यत: एक सूकर रखने की व्यवस्था होनी चाहिए या कभी-कभी दो बराबर आकार के नर भी रखे जा सकते हैं। एक प्रजनक नर सूकर को 6 वर्ग मीटर बन्द तथा 6 वर्ग मीटर खुली जगह आवश्यक है।

गर्भाधान - व्यस्क मादा सूकर का मदकाल 20-25 दिनों का होता है। मादा सूकर को गर्भाधान हेतु बाड़े में 2-3 दिनों तक रखा जाता है। सूकरी के पिछले भाग पर दबाव डालने पर उसका खड़ा रहना या स्थिर होना उसे गर्भाधान कराने के उचित समय का द्योतक/लक्षण है।

मादा सूकर के ब्याने के समय रख रखाव - मादा सूकरों का गर्भकाल 114 दिनों का होता है। मादा सूकरों को प्रसूति बाड़े में रखने से पहले गुनगुने पानी एवं साबुन से अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए। मादा सूकरों को उनके ब्याने की सम्भावित तिथि से दस दिन पहले प्रसूति कक्ष में स्थानान्तरित कर देना चाहिए। प्रसूति-कक्ष की अच्छी सफाई किसी कीटाणुनाशक दवा के माध्यम से कर देनी चाहिए। यदि स्थान कच्चा हों या मिट्टी का बना हो, तो ऊपर की दो या तीन इंच मिट्टी हटाने के बाद दुबारा उसे साफ मिट्टी डालकर बराबर कर देना चाहिए। जब वह स्थान सूख जाए, तो उसके बाद उस पर लकड़ी के बुरादे या गेहूँ के भूसे आदि का बिछावन डाल देना चाहिए।

शावकों की मृत्यु से बचाव के लिए बच्चे देने वाले स्थान (प्रसूति कक्ष) के चारों ओर एक रक्षक लाइन यानि गार्ड-रेल लगानी चाहिए, जिसकी ऊँचाई जमीन से 8-10 इंच और दीवार से 8-12 इंच दूर होना चाहिए। अधिक ठंडे मौसम में शावकों को कृत्रिम उष्मा प्रदान करने की व्यवस्था होनी चाहिए। स्टोव या हीटर की व्यवस्था से भी ठंड से बचाया जा सकता है।

बच्चों को उनकी माँ से अलग करने का समय - आजकल लगभग 8 सप्ताह बाद मादा सूकर को शावकों से अलग कर दिया जाता है, जिसे हम वीनिंग भी कहते हैं।

लाभ :

- मादा सूकर बच्चों से अलग करने के एक हफ्ते बाद ही मद या गर्मी में आ जाती है।
- शावकों के शरीर भार में एकरूपता एवं वजन में वृद्वि होती है।
- बीमारियों पर उचित नियंत्रण रख सकते हैं।
- मादा सूकर के शरीर भार में कमी नहीं आती है।

बधियाकरण - यह आवश्यक है कि नर सूकर को 4-6 सप्ताह की अवस्था में बधिया कर दिया जाए। इस बधियाकरण क्रिया के उपरान्त बधियाकृत नर सूकरों के शरीर भार में अच्छी वृद्वि होती है।

आवास व्यवस्था

सूकरों की आवास व्यवस्था उनकी संख्या के आधार पर निर्भर होती है। एक निम्न अथवा मध्यम-वर्गीय किसान अपने घर के पिछवाड़े 5-6 सूकर रखकर व्यवसाय प्रारम्भ कर सकता है। यदि सूकर पालक अधिक संख्या में सूकरों (10 संख्या से ऊपर) का पालन करने के इच्छुक हों, तो उनके लिए पक्की आवास व्यवस्था अवश्य सुनिश्चित करनी चाहिए।

सूकर को स्थान की आवश्यकता

सूकर श्रेणी	ढके स्थान की आवश्यकता (वर्ग मीटर)	खुले स्थान की आवश्यकता (वर्ग मीटर)
नर सूकर	6.0-7.5	8.8-12.0
ग्याभिन/ब्याने वाली सूकरी	7.5-9.0	8.8-12.0
सूकर के बच्चे	0.9-1.8	0.9-1.8
सूखी सूकरी	1.8-2.7	1.4-1.8

सूकरों के खान-पान पर ध्यान देनें योग्य बातें

सूकरों के भोजन के लिये बाजार में उपलब्ध बने-बनाये खाद्य-पदार्थ प्रयोग में लाये जा सकते हैं, जिनमें मक्का 40 प्रतिशत, चोकर 20 प्रतिशत, राइस पालिस 10 प्रतिशत, मैली/मोलेसस 10 प्रतिशत तथा उच्च प्रोटीन का मिश्रण 15-18 प्रतिशत, लवण मिश्रण 2 प्रतिशत एवं नमक 1 प्रतिशत होना चाहिए। लगभग 45 कि. ग्रा. शरीर भार वाले सूकर को 1.5 कि. ग्रा. राशन दिया जाना चाहिए। इसके आलावा सूकरों को घरों, होटलों, छात्रावासों से बचा भोजन तथा भोजन की जूठन सूकरों को खिला सकते हैं। आलू सस्ता होने पर इसे उबालकर सूकर के तीन-चौथाई भोजन की आवश्यकता की पूर्ति की जा सकती हैं। शीरा को बढ़ते हुए सूकरों के राशन में 20 प्रतिशत तथा बड़े सूकरों में 40 प्रतिशत तक खिलाया जा सकता है। इन अप्रचलित खाद्य-पदार्थो को खिलाने से सूकर पालन व्यवसाय काफी सस्ता हो सकता है।

सूकरों के रोग

सही प्रजनन, उचित खान-पान एवं देख-रेख के साथ-साथ सूकरों में होने वाले रोगों से बचाव पर हमें ध्यान देना अति आवश्यक है, क्योंकि स्वस्थ पशु से ही हम लाभदायी व्यवसाय चला सकते हैं महामारी के रूप में फैलने वाले रोगों जैसे खुरपका-मुँहपका एवं सूकर ज्वर आदि के बचाव के लिए टीके यथा समय पर लगवानें चाहिए। सूकर बाड़ों की सफाई, स्वच्छ पानी की व्यवस्था एवं अच्छे भोजन से भी कई रोगों से बचाव हो सकता है। इसलिए इन बातों पर भी ध्यान देना जरूरी है।

इस तरह सूकर पालन करके किसान काफी लाभान्वित हो सकते हैं।

सूकर ज्वर

प्रवीन कुमार[1], रेखा यादव[2] एवं नरेश कुमार[1]

[1]पशुचिकित्सक, हरियाणा, [2]पी.एच.डी स्नातक

भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बरेली।

सूकर ज्वर सुअरों की एक अत्यंत संक्रामक एवं आर्थिक रूप से महत्त्वपूर्ण बीमारी है। सूकर ज्वर पालतू तथा जंगली सूअरों में विश्वभर में पायी जाती है। सूकर ज्वर से बचाव के लिये टीके का उपयोग किया जाता है।

यह बीमारी सूकर नामक विषाणु से होती है; जोकि सामान्यत: छूने से संक्रमित कणों तथा संक्रमित सुअर के माँस या अन्य उत्पादों के सेवन से फैलती है।

सूकर ज्वर के लक्षण

सूकर ज्वर के लक्षण विषाणु की क्षमता, संक्रमित सूकर की उम्र तथा प्रतिरक्षा क्षमता पर निर्भर करते हैं। सूकर ज्वर अति गंभीर तथा हानिरहित रूपों में पायी जाती है। अति गंभीर तथा गंभीर रूप में तेज बुखार (103^{o}F से 106^{o}F), शक्तिहीनता, भूख न लगना, आँखों से चिपचिपा पदार्थ निकलना, उल्टी, दस्त अथवा कब्ज तथा अस्थिर चाल मुख्य लक्षण है। कुछ दिनों के पश्चात् सूकरों के कानों की सतह पर, पेट के निचले हिस्से में तथा जंघाओं में बैंगनी मलिनीकरण हो जाता है। इस रूप में सूकर की एक से तीन हफ्ते में मृत्यु हो जाती है।

कम गंभीर तथा हानिरहित रूपों में सूकर को अपेक्षाकृत अधिक अवधि तक दस्त, त्वचा का प्रदाह एवं अन्य जीवाणुओं द्वारा संक्रमण हो सकता है। इस रूप में विषाणु सूकर के सभी प्राकृतिक स्रावों में पाया जाता है जोकि अन्य सूकरों को संक्रमित कर सकता हैं। इन रूपों में सूकरों की मृत्यु कुछ हफ्तों या महीनों में हो सकती है। एक अन्य रूप में जब कम विषैला सूकर ज्वर विषाणु गाभिन सूरी को संक्रमित करता है तथा भ्रूण को गर्भाशय में संक्रमित कर देता है। ऐसी स्थिति में गर्भपात हो सकता है अथवा भ्रूण संक्रमित हो सकता है। ऐसे सूकर जन्म के कुछ ही हफ्तों या अधिकतम महीनों में कंपन तथा बीमारी के प्रगतिशील लक्षणों के बाद मर जाते हैं।

निदान

सूकर ज्वर का प्राथमिक निदान विभिन्न लक्षणों तथा शव परीक्षण द्वारा किया जाता है तथा निदान की पुष्टि प्रयोगशाला जाँच के बाद की जाती है। प्रयोगशाला जाँच हेतु जिन्दा सूकर से खून के नमूने तथा मृत पशु से गलतुण्डिका, तिल्ली, गुर्दे, आँत का निचला भाग प्रमुख रूप से उपयोगी है। अति गंभीर रूप में रक्त में क्षाररागी श्वेत कोशिका अल्पता परिक्षण किया जाता है।

बचाव एवं रोकथाम

सूकर ज्वर जैसी संक्रामक बीमारी से बचाव हेतु सूकरों को बचा हुआ खाना एवं मीट पकाकर ही देना चाहिए। संक्रमित सूकर को अलग बाड़े में रखना चाहिए तथा पशुचिकित्सक द्वारा उपचार करवाना चाहिए। सूकर ज्वर की रोकथाम हेतु तीन माह से अधिक उम्र के सूकरों को प्रतिवर्ष टीकाकरण कराना चाहिए। यह टीका हरियाणा टीका संस्थान, हिसार में भी उपलब्ध है।

बकरियों में विषाणु जनित रोग

राजेश सिंगाठिया एवं सुनील कुमार तमोली

पशु चिकित्सा विश्वविद्यालय प्रशिक्षण एवं अनुसंधान केन्द्र, चूरू

राजस्थान पशुचिकित्सा एवं पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

भारत एक कृषि प्रधान देश है एवं इसकी 70 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। उनकी आजीविका का मुख्य साधन कृषि एवं पशुपालन हैं। बकरी पालन हमारे देश का काफी प्राचीन व्यवसाय हैं। बकरी को गरीब की गाय के नाम से भी जाना जाता हैं। हमारे देश में बकरियों की कुल संख्या 13.5 करोड़ हैं। बकरी पालन में मृत्यु दर बहुत अधिक हैं और यदि मृत्यु दर पर काबू पा लिया जाए तो बकरी पालन बेहतर व्यवसाय साबित हो सकता हैं।

बकरियों में कई तरह के रोग पाए जाते हैं जिससे बकरियों की उत्पादन क्षमता पर विपरीत असर पड़ने से बकरी पालक को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। बकरियों में होने वाली विषाणु जनित बीमारियों का संक्षेप में यहाँ विवरण दिया जा रहा हैं, जिसकी सहायता से बकरी पालक अपने रेवड़ में आई बीमारी की पहचान कर अपने निकटतम पशु चिकित्सक से सलाह लेकर उपचार करवा सकता हैं।

1. **बकरी प्लेग/ पी.पी.आर./काटा** – पी.पी.आर. एक विषाणु (मोरबिलि विषाणु) जनित रोग है, जो हर उम्र और लिंग की बकरियों को ग्रसित कर सकता है। इस रोग से पशुओं की मुत्यु बहुत तेजी से होती है, इसलिए इसे बकरी प्लेग के नाम से भी जाना जाता है। अधिक मुत्यु दर की वजह से यह बीमारी आर्थिक रुप से बहुत हानिकारक है।

रोग का फैलाव : यह विषाणु रोगी पशु के द्वारा उत्सर्जित मल, मूत्र, आँख, नाक व मुँह से होने वाले स्राव में प्रचुर मात्रा में विद्यमान रहता है, अत: इस रोग से पीड़ित पशु द्वारा स्वस्थ पशु के संपर्क में आने से रोग फैलता है। दूषित चारे व पानी से भी यह रोग फैलता है।

लक्षण

- रोगी पशु को तेज बुखार हो जाता है जो चार से पाँच दिनों तक रहता है।
- मुँह, मसूड़े, तालू, होंठ व जीभ पर छाले हो जाते हैं, जिसकी वजह से प्रचूर मात्रा में तार जैसी लार बहती है।
- रोगी पशु के होंठों पर सूजन आ जाती है।
- नाक से पानी बहना तथा बाद की अवस्था में मवाद युक्त होकर नासिका को अवरूद्ध कर देता है, जिससे पशु को साँस लेने मे कठिनाई आती है तथा मुँह से साँस लेने लगता है।
- आँख से पानी बहना, आँखों में सूजन व झिल्ली का रंग गहरा लाल हो जाता है।
- पशु को दस्त हो जाते है जिससे पशु के शरीर में पानी की कमी हो जाती है ।
- अंत में अन्य विषाणुओं तथा जीवाणुओं के संक्रमण द्वारा रोगी पशु न्यूमोनिया से पीडित हो जाता है।

रोकथाम व उपचार

- रोगी पशु को स्वस्थ पशु से अलग रखना चाहिए।
- रोगी पशु को प्रति जैविक औषधि देनी चाहिए ताकि द्वितीय जीवाणु जनित बीमारियों को रोका जा सके।
- बाड़े मे दस्त इत्यादि को अच्छी तरह से साफ करें ताकि विषाणु का फैलाव रूक सके।
- तीन चार माह के उम्र के बच्चे का टीकाकरण आवश्यक रूप से करवाना चाहिए। इसका असर तीन साल तक रहता है।

2. बकरी चेचक/माता : बकरी चेचक एक प्रकार बहुत तेजी से फैलने वाला विषाणु (गोटपाक्स विषाणु) जनित संक्रामक रोग है। यह विषाणु सभी उम्र, नस्ल व लिंग की बकरियों को प्रभावित करता है, परन्तु बच्चों, कमजोर व कम प्रतिरोधक क्षमता वाले पशु व दूध देने वाली बकरियों को यह विषाणु ज्यादा प्रभावित करता है।

रोग का फैलाव : यह विषाणु स्वस्थ बकरी के रोगी बकरी के संपर्क मे आने से, हवा द्वारा और कीट मक्खी इत्यादि से फैलता है ।

लक्षण

- रोगी बकरियों में बुखार (उच्च ताप) हो जाता है ।
- आँख व नाक से पानी बहता है।
- पूरे शरीर पर फफोले बन जाते है, जो कुछ समय पश्चात पपड़ी में बदल जाते है।
- मुँह के भीतरी भाग में फफोले व घाव बन जाते है जिसके कारण पशु खाने पीने में असमर्थ हो जाता है परिणामस्वरुप उत्पादन कम हो जाता है ।
- कहीं पर पानी रखा है तो जानवर अपना मुँह पानी में डाल कर रखता है।

रोकथाम व उपचार

- रोगी पशु को स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए एवं उसकी देखभाल भी अलग से करनी चाहिए तथा बीमार पशु को नरम चारा देना चाहिए।
- रोगी पशु को प्रतिजैविक औषधि देकर द्वितीय जीवाणु संक्रमण से बचाव किया जा सकता है।
- पशुचिकित्सक की सलाह लेकर माता रोग से बचाव के लिए टीकाकरण अवश्य करवाना चाहिए।

3. मुँहपका एवं खुरपका रोग /एफ.एम.डी. - एफ.एम.डी. एक विषाणु (एफथो विषाणु) जनित रोग है, जो विभाजित (दो खुरों वाले) पशुओं मे पाये जाते है, यह रोग छोटे व बड़े सभी पशुओं में होता है।

रोग का फैलाव - इस रोग के विषाणु रोगी पशु के सम्पर्क, संक्रमित आहार व संक्रमित पानी के ग्रहण करने से स्वस्थ बकरियों में प्रवेश कर जाते हैं।

लक्षण

- रोगी पशु को तेज बुखार हो जाता है।
- मुँह से लार (झागदार व रस्सीदार) गिरना ।
- मुँह के भीतरी भाग में फफोले बनने लग जाते है, जो बाद में फोड़े व घाव बन जाते हैं। इन घावों के कारण दर्द होता है जिसके कारण पशु खाने पीने में असमर्थ हो जाता है तथा चारा न खाने के कारण बकरियाँ कमजोर हो जाती है परिणामस्वरुप शारीरिक भार व उत्पादन कम हो जाता है तथा मृत्यु दर भी बढ़ जाती है।
- पशु के खुरों के बीच में भी फफोले, फोड़े व घाव हो जाते हैं, जिसके कारण पशु लंगड़ाकर चलने लगता है।
- नासिका और खुरों के बीच होने वाले घावों मे द्वितीय जीवाणु का संक्रमण भी हो सकता है, अगर इन घावों का शीघ्र ही उपचार न किया जाए तो इनमें कीड़े पड़ जाते है।

रोकथाम व उपचार

- रोगी पशु को स्वस्थ बकरियों से अलग रखना चाहिये ।
- मुहँ के छालों में बोरोग्लिसरीन मलहम लगाना चाहिये।

- खुरों के छालों को लाल दवा (पौटेशियम परमैग्नेट) /फिटकरी / नीले थोथे (कापर सल्फेट) /फोर्मलीन के घोल से दिन में दो बार धोना चाहियें ।
- पशुचिकित्सक की सलाह लेकर इस रोग से बचाव के लिए टीकाकरण अवश्य करवाना चाहिए। यह टीका प्रथम बार चार माह की उम्र पर लगाया जाता हैं तत्पश्चात प्रत्येक 6 महीनें पर लगाते हैं इसलिए बकरी का टीकाकरण वर्ष में दो बार (वर्षा ऋतु से पहले और बसन्त ऋतु के आरम्भ) करवाना चाहियें।

4. ब्लू टंग - यह एक विषाणु (ओरबी विषाणु) जनित रोग हैं।

रोग का फैलाव - यह विषाणु क्यूलिकोइडस नामक मच्छर के माध्यम से फैलता हैं।

लक्षण

- रोगी पशु को तेज बुखार हो जाता है।
- मुहँ से लार गिरती है व नाक से स्राव होता है।
- मुहँ व नाक पर लाली बढ़ जाती हैं।
- कुछ पशुओं में जीभ नीले बैंगनी रंग की हो जाती हैं।
- पशु सुस्त होकर चारा खाना छोड़ देता हैं।

रोकथाम व उपचार

- रोगी पशु को स्वस्थ बकरियों से अलग रखना चाहिये ।
- टीकाकरण करवाना चाहियें।

5. कन्टेजियस पोस्टूलर डेरमेटाईटिस/कन्टेजियस ऐक्थाइमा/मोहा/मुहाँ रोग/सोर माउथ - यह एक विषाणु (पेरापोक्स विषाणु) जनित रोग हैं, जो बच्चों को ज्यादा प्रभावित करता हैं। यह रोग पशुओं को सर्द ऋतु में प्रभावित करता हैं। सामान्यता इस रोग में मृत्यु दर कम होती है, लेकिन रोगी पशु का उत्पादन कम हो जाता है जिसकी वजह से बकरी पालक को आर्थिक हानि उठानी पड़ती हैं।

लक्षण

- रोगी पशु को तेज बुखार हो जाता है।
- रोगी पशु को भूख नहीं लगती ओर पशु सुस्त हो जाता हैं।
- आँख व नाक से पानी टपकता हैं।
- नथनों व होठों पर फफोले व घाव बन जाते है, जिसके कारण बच्चे दूध नहीं पी पातें और शारीरिक रूप से कमजोर हो जाते हैं।

रोकथाम व उपचार

- रोगी पशु को स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए एवं उसकी खान-पान की व्यवस्था भी अलग से करनी चाहिए और बीमार पशु को नरम चारा देना चाहिए।
- घावों को लाल दवा से धोकर प्रतिजैविक औषधि का लेप लगाना चाहिए।
- रोगी पशु को प्रतिजैविक औषधि देकर द्वितीय जीवाणु संक्रमण से बचाव करना चाहिए।

पागल कुत्ते द्वारा काटने पर रेबीज़ से बचाव

सुधि रंजन गर्ग

विस्तार शिक्षा निदेशक

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

रेबीज़ एक अत्याधिक भयानक व घातक रोग है जो मुख्यत: पागल कुत्ते, गीदड़ या नेवले के काटने से होता है। एक बार यदि इस रोग के लक्षण प्रकट हो जाएँ तो फिर इससे बचना असंभव हो जाता है व रोगी पशु या व्यक्ति की कुछ ही दिनों में मृत्यु हो जाती है। रेबीज़ विषाणु इस रोग का कारण है। विश्व भर में प्रतिवर्ष लगभग 55000 व्यक्ति इस रोग से मृत्यु को प्राप्त होते हैं, जिनमें से 20000 से भी अधिक मौतें भारत में होती हैं। अनगिनत पशु भी इस रोग की चपेट में आकर मरते हैं। जिससे पशुपालकों को अत्याधिक आर्थिक हानि होती है।

रेबीज़ से संक्रमण

भारत में यह रोग मुख्यत: पागल कुत्तों के काटने व उनकी लार में पाए जाने वाले रेबीज़ विषाणुओं से होता है। काटने पर विषाणु दूसरे पशुओं या मनुष्यों के शरीर में चले जाते हैं तथा रोग का कारण बनते हैं। इसके अतिरिक्त नेवला, बिल्ली, बन्दर, गीदड़, लोमड़ी व अन्य स्तनधारी पशु जैसे कि गाय, भेड़, बकरी, ऊँट, घोड़े आदि भी रेबीज़ रोग का प्रसार करते हैं। रेबीज़ के विषाणु शरीर में प्रवेश के बाद, स्नायु तन्त्र के द्वारा धीरे-धीरे मस्तिष्क में पहुँच जाते हैं तथा उसे प्रभावित कर देते हैं।

कुत्तों में रेबीज़ के लक्षण

इस रोग से प्रभावित कुत्तों के व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। इनमें दो प्रकार के लक्षण पाए जाते हैं। कुछ कुत्ते मौन अवस्था दिखाते हैं जिसमें वे सुस्त हो जाते हैं, एक कोने में बैठे रहते हैं, लकवा हो जाता है तथा कुछ ही दिन के अन्दर मृत्यु हो जाती है। दूसरी अवस्था उग्र अवस्था होती है जिसमें रोगी कुत्ता चिड़चिड़ा हो जाता है तथा जंजीर, लकड़ी, पत्थर, ईंट आदि को काटने लगता है। कुत्ता खतरनाक हो जाता है तथा काटने को दौड़ता है। पागल कुत्ते इधर-उधर दौड़ने लगते हैं तथा उनके मुँह से लार टपकती रहती है। धीरे-धीरे कुत्ते को लकवा होने लगता है तथा उसकी आवाज में अन्तर आ जाता है। रोगी कुत्ते की मृत्यु लक्षण प्रकट होने के 10 दिन के अन्दर हो जाती है।

मौन अवस्था
(सी.डी.सी. के सौजन्य से)

उग्र अवस्था
(सी.डी.सी. के सौजन्य से)

मनुष्यों में रेबीज़ के लक्षण

रोगी मनुष्य में सबसे पहले बुखार, सुस्ती व सिर दर्द के लक्षण आते हैं। परन्तु धीरे-धीरे उसकी दशा बिगड़ जाती है। रोगी व्यक्ति पानी नहीं पी पाता, तथा पानी देखते ही बहुत व्यग्र हो जाता है। वह व्यक्ति पानी से डरने लगता है। थोड़े समय में ही रोगी व्यक्ति का मानसिक सन्तुलन बिगड़ जाता है व उसे लकवा मार जाता है। रोगी की मृत्यु लक्षण प्रकट होने के कुछ ही दिन के अन्दर हो जाती है।

अन्य पशुओं में रेबीज़ के लक्षण

बिल्लियों में रेबीज़ की उग्र दशा दिखाई देती है। रेबीज़ ग्रसित बिल्ली हवा में पंजे मारने लगती है जैसे कि हवा में चूहे पकड़ रही हो। अन्य पशुओं जैसे कि गाय, भैंस, भेड़, बकरी, ऊँट, घोड़े आदि में भी रोग इसी प्रकार होता है तथा पशुओं में उग्रता, पागलपन, लकवा तथा मृत्यु होती है, परन्तु उनमें पानी से डर का लक्षण नहीं होता। गायों के मुँह से लार उत्पन्न होती है। उनकी पिछली टांगें कमजोर होने लगती हैं। गाय बहुत रम्भाती है, परन्तु उसकी आवाज़ बदल जाती है। रोगी गाय दीवार, वृक्ष आदि में टक्कर मारने लगती है। अन्य पालतू पशुओं में भी इसी प्रकार के लक्षण दिखाई पड़ते हैं।

मनुष्य में रेबीज़
(सी.डी.सी. के सौजन्य से)

रोग की पहचान

कुत्ते या जंगली जानवर के काटने के कुछ हफ्तों के बाद मनुष्य या पशु में मानसिक लक्षणों का प्रकट होना रेबीज़ रोग होने की संभावना दर्शाता है। लक्षण आने से पहले रोग का पता लग पाना मुश्किल है।

रोग से बचाव

आवारा कुत्ते से अपना बचाव करना चाहिए। रोग हो जाने के बाद इसका उपचार नहीं है, परन्तु कुत्ते द्वारा काटे जाने के तुरन्त बाद यदि टीकाकरण करवाया जाए तो रोग से बचाव हो जाता है। कुत्ते के काटने पर तुरन्त काटे गये स्थान को साफ पानी से 15-20 मिनट तक धोना चाहिए। साबुन से घाव की सफाई की जानी चाहिए तथा घाव पर बीटाडीन एन्टिसैप्टिक दवा या अल्कोहल लगानी चाहिए। घाव पर मिर्च मसाला आदि न लगाएँ। नीम हकीम, झाड़-फूँक आदि में समय न गवाएँ। इसके पश्चात् तुरन्त चिकित्सक से सम्पर्क करें और टीकाकरण करवायें। तुरन्त व सही टीकाकारण रेबीज़ रोग से बचा सकता है। टीके 0, 3, 7, 14 व 30 दिन पर लगते हैं।

पालतू कुत्तों को रेबीज़ से बचाव के टीके प्रति वर्ष लगवाने चाहिए। कुत्ते द्वारा काटने के पश्चात् उसे दस दिन तक निरीक्षण में रखना चाहिए। यदि ऐसा कुत्ता रेबीज़ से ग्रसित है तो उसमें लक्षण प्रकट हो जाते हैं व उसकी मृत्यु हो जाती है।

पालतू जानवर को दूसरे जानवर द्वारा काटे जाने पर पालतू जानवर की पशु चिकित्सक से तुरन्त जाँच करवायें व टीकाकरण के बारे में राय लें। पागल कुत्ते व बिल्ली की पशु चिकित्सक से जाँच करवायें। प्रभावित जानवर को दस दिन तक निगरानी में रखें। दूध देने वाली गाय/भैंस इत्यादि में रेबीज़ होने पर बीमारी के विषाणु दूध में भी आते हैं। इसलिए ऐसे पशुओं का दूध प्रयोग में न लाएँ।

रेबीज़ की रोकथाम

कुत्तों व बिल्लियों का टीकाकरण करवाएँ। पालतू पशुओं को खुला न छोड़ें क्योंकि आवारा कुत्तों के सम्पर्क में आने पर उनमें रोग का संक्रमण हो सकता है। पालतू कुत्तों का बधियाकरण करवाएँ, यह रेबीज़ की रोकथाम में सहायक है। घर के बाहर गन्दगी व खाना न छोड़ें क्योंकि इससे आवारा व जंगली जानवर आकर्षित होते हैं। जंगली जानवरों को पालतू न बनायें। जंगली जानवरों को न छूएँ। यदि किसी जानवर में असामान्य व्यवहार देखें तो स्थानीय पशुचिकित्सा विभाग व स्वास्थ्य विभाग को सूचित करें। आवारा कुत्तों की रोकथाम में सहयोग दें। पालतु कुत्तों को बाँध कर या अपनी निगरानी में रखें ताकि वे किसी को काटे नहीं।

याद रखें ! रेबीज़ से बचाव सम्भव, परन्तु रोग हो जाने पर उपचार असम्भव है।

घोड़ों में पेट दर्द : एक घातक रोग

दिनेश गुलिया, राजेन्द्र यादव एवं अशोक कुमार

पशु औषधि विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

घोड़ों में उदर शूल अथवा कोलिक अर्थात पेट दर्द को पौराणिक काल से ही नुकसानदायक रोग माना गया है। प्राचीन काल में पशु चिकित्सा के जानकार सालिहोत्र कहलाते थे। सालिहोत्र से ही सालिहोत्री शब्द बना जिसका अर्थ अश्व चिकित्सक है। कोलिक का शाब्दिक अर्थ कोलन (आंत का हिस्सा) में दर्द होता है, लेकिन चिकित्सा जगत में पेट में होने वाले किसी भी दर्द को कोलिक कहा जाता है। यह मिश्रित लक्षण है, जो उदर के किसी अंग की पीड़ा को दर्शाता है।

जठरान्त्र (आंत एवं पेट) से पैदा होने वाले शूल को वास्तविक शूल या कोलिक कहते है, लेकिन जठरान्त्र के बाहर स्थित अंग मसलन गर्भाशय, यकृत (जिगर), गुर्दा, पेरिटोनियल अन्त्रपेशी इत्यादि से उत्पन्न शूल को मिथ्या शूल कहते हैं।

शूल का मूल कारण है

- आहार में विकृति, अन्न एवं चारे की विषम स्थिति कीचड़-बालू मिश्रित दाना, सड़ा-गला चारा एवं पुलाव तथा आहार में विषाक्त पौधे आदि।
- आहार लेने के तुरन्त बाद घोड़े को दौड़ाना व थकावट आदि।
- अचानक चारा बदली करना।
- आँत या पेट में परजीवी होना।

उदर शूल मुख्यतः चार प्रकार का होता है

1. **ऐंठन-युक्त शूल (स्पासमोडिक कोलिक)**- इस प्रकार का शूल अचानक होता है। इसमें तीव्र अनियमित आँत गतिशीलता पाई जाती है। शूल से उद्विग्न होकर पशु जल्दी-जल्दी उठता बैठता है तथा जमीन पर लेटता है। रूक-रूक कर मूत्र त्याग करता है।

कारण

खराब गुणवत्ता का चारा-दाना विशेषकर बालू मिला दाना, आँत की नली में खरोंच पड़ना, अधिक कार्य करना व थकावट के तुरन्त बाद ठंडा पानी पीना। खाने के बाद ठंडा पानी पीने से दर्द अचानक उठता है। किसी कारणवश भयभीत होने तथा आहार में बदलाव होने से भी अचानक दर्द उठता है। ऐंठन का कारण परजीवी भी हो सकते है।

लक्षण

- बिना उदर के फूले हुए रूक-रूक कर दर्द उठना।
- तापमान असामान्य होना अथवा तापमान बढ़ना।
- श्वास व नाड़ी गति में तीव्रता एवं पसीना आना
- पशु बेचैन दिखना।
- पशु का पेट में लात मारना तथा बार-बार पेट (कोंच) की ओर देखना।
- बार-बार थोड़ी मात्रा में पेशाब करना।
- आँत की गुड़गुड़ाहट दूर से ही सुनाई पड़ती है। परिश्रवण से आँत से निकली आवाज साफ सुनाई देती है।

2. **अफारा के साथ शूल (टिमपेनिक कोलिक)** – जब आमाश्य या बड़ी आँत गैस से भरकर अत्याधिक फैल जाती है, जिसके कारण दर्द अचानक उठता है।

कारण

जल से भरा हरा घास अत्यधिक खा लेने के बाद यह स्थिति अधिकतर होती है। आहार में अचानक बदलाव एवं सड़ा–गला आहार रोग का कारण है। आहार में कार्बोहाइड्रेट अधिक रहने से आमाश्य एवं आंत में गैस तेजी से अधिक बनती है, जिससे पाचन नली का फैलाव होता है, जो पीड़ा का कारण है।

लक्षण

- दर्द का लगातार बने रहना, अश्व द्वारा पीठ को सदैव ऐंठते रहना व बैठ न पाना इस रोग का लक्षण है।
- दाँयी या बाँई ओर कोख के अत्यधिक फूलने से आभास होता है कि बड़ी आंत में गैस ज्यादा है।
- मलद्वार खुला रहता है, जिससे कभी–कभी गैस और थोड़ा–थोड़ा गोबर भी निकलता है।
- घोड़ा पेशाब करने की स्थिति में देर तक रहता है।
- नाड़ी, तापमान एवं श्वास बढ़ा रहता है।
- दाँयी ओर के कोख के परिक्षण करने पर टींकलींग की ध्वनि सुनाई पड़ती है।
- क्षुधा हीनता, निर्जलीकरण, अमूत्रता का लक्षण दिखना।
- मृत्यु श्वास रूकने से होती है।

3. **अन्तर्घट्टन शूल (ईम्पैक्टिव कोलिक)** – जब घोड़ा अधिक मात्रा में कार्बोहाइड्रेट युक्त खुराक खा लेता है, तो आमाशय शेष अधांत्र कपाट (ईलियो–सिक्ल वाल्व) और बड़ी आँत में आहार ठसाठस भर जाता है।

कारण

चारा, अनाज और सूखा घास खा लेने से घोड़ों में जब आमाशय भरपूर भर जाता है, आमाशय की दीवार की गति मंद पड़ जाती है, जिससे पेट फूल जाता है।

लक्षण

- पशु तीव्र दर्द का अहसास करता है।
- खाया हुआ आहार एवं जल नसिका से वापस आता है।
- क्षुधाहीनता के साथ सुस्ती और थोड़ा–थोड़ा मल भी होता है।

4. **अवरोधक शूल (ओब्सट्रक्टिव कोलिक)**– इस प्रकार का शूल लगातार बना रहता है क्योंकि यह आँत के रूकने, आँत में फंदा लगने या बल पड़ने के कारण होता है। यह तीन प्रकार को होता है–वोलवुलस, आत्रांत्र प्रवेश, विपाशन।

कारण

वोलवुलस में आँत का फंदा ऐंठ जाता है। विपाशन हरनिया या मेसेन्ट्री के टूटने से होता है। आत्रांत्र में आंत का पीछे वाला भाग आंत के आगे वाले भाग पर चढ़ जाता है। परजीवीयों द्वारा गुच्छा बनाना, कंकड़, पत्थर या रेत (मिट्टी) अथवा बाह्य पदार्थ आंत की रूकावट का कारण हो सकते है।

लक्षण

तीव्र दर्द लगातार बना रहता है। रक्त मलाशय से निकलता है। उदर का वितान अत्यधिक रहता है। मल कालानुमा व सफेद चितके के साथ निकलता है। अश्व लीद करना बंद कर देता है।

उदर शूल का उपचार

- पैराफीन 500–1000 मि.ली. एक व्यस्क घोड़ें को दिया जा सकता है।
- अलसी का तेल 500–800 मि.ली. दिन में दो बार पिलाएँ।
- अलसी के तेल के साथ 10 ग्रा. हींग और 15 मि.ली. तारपीन को तेल मिलाकर दिन में दो बार पिलाएँ।
- टीमपोल/बलोटोसील 60–100 मि.ली. मुँह से दें।
- साबुन व पानी का एनिमा रेक्टम के जरिए आंतों में अन्दर तक डालें। इसके बाद पशु को इधर–उधर चलाएँ व दौड़ाएँ।
- आराम न आने पर या घोड़ें की हालत अधिक बिगड़ने पर तुरन्त पशु चिकित्सक की सलाह पर पेट के कीड़ों की दवा दी जा सकती है।

उदर शूल का बचाव

- सड़ा–गला, फफूँद लगा हुआ व अधिक डंठल युक्त चारा घोड़े को न दें। पशु को उच्च गुणवत्ता का चारा–दाना दें।
- घोड़ें को संतुलित आहार दें। अत्यधिक हरा या सुखा चारा अथवा अत्यधिक दाना अश्वों को न दें।
- उदर शूल के लक्षण आने पर घोड़ों को 24 घंटों तक चारा, दाना पानी नहीं दें।
- घोड़ों को प्रयाप्त काम (एक्सरसाइज) दें।
- आहार लेने के तुरन्त बाद घोड़ें को ठंडा पानी न पिलाएँ।
- पीने के पानी की व्यवस्था घोड़ों के पास हर समय रखें।
- आहार के तुरन्त बाद घोड़ें को काम पर न लगाएँ।
- घोड़ों के दाँतों की नियमित रूप से जाँच कराएँ।
- पेट के कीड़ों की दवाई हर तीन महीनें में पशु–चिकित्सक की सलाह पर देते रहे।
- अचानक खान–पान में बदलाव न करें।
- लक्षण आने पर तुरन्त पशु–चिकित्सक से सम्पर्क करें।

लैंप-पशुओं की बीमारी पहचानने के लिए एक कारगर तकनीक

अनुज तिवारी, सुशीला मान एवं कनिष्ठ बतरा

पशु जैव-प्रोद्योगिकी विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

भेड़ एवं बकरी पालन व्यवसाय किसान भाइयों की आमदनी का एक अच्छा स्त्रोत है। अत: यह नितांत आवश्यक है कि भेड़ एवं बकरियों की बीमारियों को अति शीघ्र पहचाना जाए एवं सही समय पर उपचार किया जाए। इनमें से कुछ बीमारियाँ जैसे की नीली जीभ, भेड़ और बकरियों का चेचक एवं पी.पी.आर. प्रमुख है। इन बीमारियों से ग्रस्त होने पर पशुपालन व्यवसाय को भारी आर्थिक नुकसान होता है। अत: इन बीमारियों को जल्द से जल्द पहचानना आवश्यक हो जाता है।

बीमारियों के लक्षण - नीली जीभ भेड़ों की एक संक्रामक बीमारी है। जिसमे बुखार, मुँह और जीभ पर सूजन और जीभ का नीला होना प्रमुख लक्षण हैं। यह बीमारी गाय और भैंसों में भी होती है, परन्तु इनमें बीमारी के लक्षण दिखाई नहीं देते हैं। गाय और भैंस इस विषाणु के कैरियर भी हो सकते हैं। नीली जीभ के अतिरिक्त भेड़ एवं बकरियों में भेड़ और बकरियों का चेचक एवं पी.पी.आर. भी पाया जाता है।

भेड़ और बकरियों का चेचक एक विषाणुजन्य रोग है जो भेड़ों में बहुत अधिक भयानक रूप धारण कर लेता है। पशुओं के मिलने वाले रोग में भेड़ चेचक सबसे अधिक गंभीर होता है। पी.पी.आर. भी भेड़ एवं बकरियों का रोग है जो की एक विषाणु द्वारा होता है। इसमें बुखार, दस्त और मुँह में छाले होना प्रमुख लक्षण हैं।

उपलब्ध टेस्ट/तकनीक - इन बीमारियों को लैब में पहचानने के लिए अनेक टेस्ट उपलब्ध हैं जैसे पी.पी.आर., एल-आसीया, सेल कल्चर इत्यादि। परन्तु ये सभी टेस्ट लैब में ही किये जा सकते हैं और इन्हें करने में 5 घण्टे से लेकर 5 दिन तक लग सकते हैं। अत: एक ऐसे टेस्ट की नितांत आवश्यकता है जो की कम समय में ही फील्ड अथवा सैंपल लेते समय ही किया जा सके। इससे कम समय में फील्ड में ही बीमारी का पता लगाया जा सकता है एवं बीमारी की रोकथाम के लिए आवश्यक प्रयाद जल्द से जल्द उठाए जा सकते हैं। ऐसे ही एक टेस्ट/तकनीक का नाम लैंप टेस्ट है।

लैंप तकनीक की उपयोगिता - लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, डिपार्टमेंट ऑफ़ एनिमल बॉयोटेक्नोलॉजी में नीली जीभ, भेड़ और बकरियों का चेचक एवं पी.पी.आर. की जाँच के लिए लैंप टेस्ट विकसित किया गया है। इस टेस्ट की 2 विशेषताएँ हैं प्रथम की यह टेस्ट 1-2 घण्टे में एक वॉटर बाथ अथवा गर्म पानी जिसका तापमान 60-65 डिग्री हो, किया जा सकता है दूसरा, इस टेस्ट के परिणाम के निष्कर्ष को जानने के लिए किसी यन्त्र की आवश्यकता नहीं होती है। इसे टेस्ट करने के पश्चात् मैलापन पैदा होने पर अथवा रंग में परिवर्तन होने पर पॉजिटिव एवं मैलापन अथवा रंग परिवर्तन ना होने पर नेगेटिव माना जा सकता है। अन्य शोध कार्यों में पाया गया है की टेस्ट विषाणुओं की मौजूदगी अन्य उपलब्ध टेस्टों से 100 गुना अधिक क्षमता से ढूँढ सकता है। यह टेस्ट फील्ड (पेन साइड टेस्ट) पर भी कारगर, हालाँकि इसको पेन साइड बनाने के लिए प्रयास जारी हैं। अत: ऊपर दिए तर्कों द्वारा इस टेस्ट की उपयुक्तता अन्य उपलब्ध टेस्टों पर सिद्ध होती है।

निष्कर्ष - सही और कम समय पर इन बीमारियों का पता लगने से और उसको फैलने से रोककर हमारे देश को हर वर्ष होने वाले आर्थिक नुकसान से बचाया जा सकता है। सारांश में उपरोक्त दी गयी बीमारियों की पहचान के लिए विकसित किया गया लैंपटेस्ट एक कारगर तकनीक है जो कि कम समय में नतीजे दे सकती है और इन बीमारियों की रोकथाम से हमारे देश के पशुओं को इन बीमारियों के होने से बचाया जा सकता है।

अल्ट्रासोनोग्राफी का प्रजनन प्रणाली के मूल्यांकन में योगदान

ज्ञान सिंह, रमेश कुमार चंदोलिया एवं आनन्द कुमार पाण्डेय

पशु प्रसूति एवं प्रजनन विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

अल्ट्रासोनोग्राफी महिला प्रजनन प्रणाली के मूल्यांकन के लिए एक महत्त्वपूर्ण नैदानिक उपकरण बन गया है। अल्ट्रासोनोग्राफी की मदद से एक गैर-आक्रामक तरीके से पूरी प्रजनन प्रणाली को देखना संभव हुआ है।पशुओं में अल्ट्रासाऊण्ड का उपयोग गर्भावस्था की जाँच, प्रजनन अंगों में किसी बीमारी की जाँच, भ्रूण मौत आदि के लिए किया जाता है।

पशुओं में अल्ट्रासाऊण्ड करने के लिए प्राय: 3.5 मेगाहर्ट्ज़, 5 मेगाहर्ट्ज़, 7.5 मेगाहर्ट्ज़ आवृति का उपयोग किया जाता है। कम आवृति के साथ ऊतक पैठ गहरी हो जाती है परन्तु अल्ट्रासाऊण्ड छवि संकल्प कम हो जाती है। इसके विपरित अधिक आवृति के साथ ऊतक की गहराई में घूसना कम होता है, परन्तु बेहतर छवि संकल्प दिखाई पड़ती है।

अल्ट्रासोनोग्राफी यंत्र

लुवास विश्वविद्यालय के पशु चिकित्सालय में अल्ट्रासोनोग्राफी यंत्र का प्रयोग करते हुए

अल्ट्रासाऊण्ड छवियों का वर्णन गूंज के आयाम पर निर्भर करता है जो इकोजेनिसिटी के रूप में अच्छी तरह से अध्ययन किया जाता रहा है। एक एनइकोजेनिक संरचना गूंज उत्पादन नहीं करता है, इसके बजाए यह लहरों को और अधिक गहरे स्थित ऊतकों पर पहुँचा देता है। एक एनइकोजेनिक संरचना सक्रीन पर काले रंग की दिखाई देती है, उदाहरण के लिए कूपिक तरल पदार्थ। आईसो इकोजेनिक आस-पास के ऊतकों के साथ उसी तरह की इकोजेनिसिटी का वर्णन करने में लिए प्रयोग किया जाता है। हाईपोइकोजेनिक और हाईपरइकोजेनिक आस-पास के ऊतक की तुलना में क्रमश: कम और ज्यादा इकोजेनिसिटी (सफेद रंग) का संकेत देता है।

अल्ट्रासाऊण्ड का सबसे अधिक सराहनीय योगदान गाय/पशुओं में गर्भावस्था की सटीक जाँच में है। गर्भावस्था परीक्षा आमतौर प दुग्ध उत्पादकों के लिए आवश्यक और लाभदायी मानी जाती है। पिछले 50 वर्षों से गर्भावस्था की ट्रांसरेक्टल जाँच की जाती रही है, परन्तु ट्रांसरेक्टल जाँच पशु चिकित्सक के अनुभव और कौशल पर आश्रित है और यदि गर्भावस्था को प्रारंभिक चरण में टटोलने का कार्य किया जाता है तो यह भ्रूण की मौत का कारण भी बन सकता है। इसके आलावा ट्रांसरेक्टल परीक्षण के द्वारा कम से कम 30-35 दिन की गर्भावस्था का होना आवश्यक है,परन्तु अल्ट्रासाऊण्ड के उपयोग से 25 दिन या उससे पहले भी (22 दिन) गर्भावस्था की जाँच सम्भव है। साथ ही, भ्रूण को टटोलने के कार्य को, अल्ट्रासाऊण्ड से बचाया जा सकता है, जिससे भ्रूण मौत की स्थिति उत्पन्न नहीं होती।

अल्ट्रासाऊण्ड पशुओं के लिए, ट्रांसरेक्टल जाँच की तुलना में कम दर्दनाक और अधिक सटीक है। गर्भावस्था की पुष्टि के दौरान भ्रूण की दिल की धड़कन पर विशेष ध्यान दिया जाता है। भ्रूण के दिल की धड़कन की आवृति लगभग 140–160 प्रति मिनट होती है।

गर्भावस्था की जाँच के अलावा, अल्ट्रासाऊण्ड का उपयोग, अंडाशय की जाँच के लिए भी किया जाता है। अंडाशय में कूप अथवा लुटियल संरचना में भेदभाव करने के लिए अल्ट्रासाऊण्ड का उपयोग किया जाता है। एक कूपिक संरचना, अपनी पतली दीवार और समान एनइकोजेनिक कूपिक तरल पदार्थ द्वारा लुटियल पुटी से अलग दिखाई देती है। कूपिक पुटी तथा लुटियल पुटी के व्यास की जाँच द्वारा इनके सिस्टिक होने का पता लगाया जा सकता है, जो कि बीमारी की तरफ संकेत करता है।

अल्ट्रासाऊण्ड के द्वारा गर्भाशय में पॉयोमेट्राईटिस का पता लगाया जा सकता है। पॉयोमेट्राईटिस में अल्ट्रासाऊण्ड काले रंग की पृष्ठ भूमि में चल प्रतिध्वनिजनक सामग्री की उपस्थिति एनइकोजेनिक तरल पदार्थ के रूप में करती है।

अल्ट्रासाऊण्ड तकनीक का सबसे आधुनिक उपयोग भ्रूण की सेक्सिंग में किया जा रहा है। अल्ट्रासाऊण्ड भ्रूण सेक्सिंग 50–100 दिन की गर्भावस्था के बीच हो सकती है, परन्तु 60–70 दिन के बीच जाँच इसके लिए आदर्श समय है।लगभग 50 दिन की गर्भावस्था के दौरान, नर अथवा मादा भ्रूण को उनके अननांग–ट्यूबरक्ले की स्थिति में भिन्नता तथा नर में वृषणकोश की सूजन के आधार पर पहचाना जा सकता है।

मूल रूप से अल्ट्रासाऊण्ड तकनीक का उपयोग कर पशुपालक अपने पशु द्वारा अधिक लाभ अर्जित कर सकते है, क्योंकि भ्रूण के जीवित अथवा मृत की समय पर जाँच या गर्भावस्था की समय पर जाँच, पशुपालकों को समय पर पशु सम्बन्धित उचित कदम उठाने में सहायक हो सकती है।इनके अलावा कूपित के व्यास की जाँच करवाने से पशुओं में बीज रखवाने के उचित समय का भी पता लगाया जा सकता है, जिससे गर्भाधान हो सकें।

अंतत: अल्ट्रासाऊण्ड पशुपालकों के लिए वरदान साबित हो सकती है, इसका विकास प्रतिवर्ष नई उपल्बधियाँ प्राप्त कर रहा है।

एक पशुपालक महिला की सफलता की कहानी

संतोष शर्मा

किसान भाईयो व बहनो इनसे मिलिए, ये हैं श्रीमती राजबाला धर्मपत्नी श्री ज्ञान सिंह। गाँव मदीना की यह बेटी और गाँव गावड़ की बहू आत्मनिर्भरता की मिसाल हैं। इनके डेयरी व्यवसाय की प्रगति को हमने सफलता की कहानी के रूप में चुना है। लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय में विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा आयोजित एक व्यावसायिक पशुपालन प्रशिक्षण के समापन समारोह पर, इन्हें 30 नवम्बर 2015 को प्रशिक्षणार्थियों को प्रेरित करने के उद्देश्य से अपनी सफलता की कहानी सुनाने के लिए आमंत्रित किया गया। विश्वविद्यालय के कुलपति मेजर जनरल श्रीकांत जी ने इन्हें एक विशेष प्रमाण-पत्र प्रदान कर सम्मानित किया।

आज से दो-तीन साल पहले श्रीमती राजबाला सिलाई का काम करती थीं व एक-दो पशु घर में दूध की जरूरत के अनुसार रखती थीं। सिलाई के काम में इन्हें लगा कि आमदनी बहुत कम है जो इनके बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने के सुनहरे सपने को पूरा करने में पर्याप्त नहीं है। इन्हें लगा कि इस काम में ये पशुओं पर भी उचित ध्यान नहीं दे पा रही हैं। इनका घर पशुपालन व्यवसाय के स्थानानुसार छोटा था, सो इन्होंनें अपने जीवनसाथी के साथ विचार कर गाँव की कृषि-भूमि पर पशुधन बढ़ाकर डेयरी व्यवसाय करना उचित समझा। गाँव में पशुपालन की आवास व्यवस्था का उचित प्रबंधन आसान था, पर दूसरी ओर वहाँ दूध की बिक्री नहीं थी। अब समस्या यह थी कि शहर के नजदीक लगते गाँव से दूध को सुबह-शाम अपने आवास पर कैसे लाया जाए, राजबाला के पति भिवानी जिले में कार्यरत है जबकि इनके बच्चे पढ़ने वाले, अत: इन्होंनें स्वयं टाटा पिक-अप को अपने पति एवं बच्चों की प्रेरणा से चलाना सीखा। इनके पास आज 30 पशु हैं, जिनकी देखभाल ये केवल एक सहायक के साथ मिलकर करती हैं। दुधारू पशुओं के दुग्ध दोहन का कार्य भी ये स्वयं करती हैं। दूध की बिक्री का कार्य इनके निवास स्थान आज़ाद नगर हिसार में ही होता है। दूध की अच्छी गुणवत्ता के कारण आस-पास के घरों के लोग इनके घर से ही दूध खरीद कर अपनी दूध की आवश्यकता पूरी करते हैं।

राजबाला का कहना है कि लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय में पशुपालन का व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद इनको पशुधन व्यवसाय से जुड़ी बहुत-सी नई-नई जानकारियों का पता चला जिससे इनकी आय में बढ़ोत्तरी हुई। पशुपालन के खर्चे निकालकर राजबाला 50,000 रूपये मासिक आमदनी के रूप में कमाती हैं। सुबह 3:30 बजे से रात 11 बजे तक पशु व्यवसाय में जी-जान से मेहनत करने वाली श्रीमती राजबाला अपनी मेहनत की गाड़ी कमाई को बच्चों की उच्च शिक्षा पर खर्च कर उन्हें काबिल बना रही हैं। इनकी संतान भी माँ की इस मेहनत का आदर कर शिक्षा के क्षेत्र में परिश्रम कर माँ के सपने को साकार करने में प्रयासरत है।

पशुपालन में अपने अनुभव प्रशिक्षणार्थियों में बाँटते हुए श्रीमती राजबाला ने कहा कि पशुपालन एक मुनाफे का व्यवसाय है परन्तु इसमें मुनाफा वही पशुपालक कमा सकता है जो मेहनती हो। जब इन्होंनें सिलाई का कार्य बंद करके सारा ध्यान पशुपालन की उचित देखभाल पर लगाया तो इन्हे बहुत अधिक आमदनी हुई। पशुओं की उचित देखभाल ही इस व्यवसाय का मूल मन्त्र है, आप जितनी अधिक देखभाल करेंगें आप का लाभ भी बढ़ जाएगा। इस व्यवसाय ने लाभ के साथ-साथ इन्हें नाम भी दिया है।

गाँव में पशु व्यवसाय में आने वाली मुख्य समस्याओं में पशुपालकों में टीकाकरण और अन्य बीमारियों के निवारण की जानकारियाँ न होना और बिजली का न होना बताया। इसके निवारण हेतु जरूरी है कि पशुपालक इनकी तरह विश्वविद्यालय से जुड़ें और पशुपालन में आने वाली समस्याओं को वैज्ञानिकों से बाँटे। श्रीमती राजबाला की सफल पशुपालक के रूप में कहानी से प्रेरित होकर आप भी ग्रामीण बहनों को इस क्षेत्र में आगे लाने का प्रयास कीजिए ताकि रात-दिन पशुओं की देखभाल करने वाली हमारी बहनें भी आत्मनिर्भरता की मिसाल बनें।

Form IV

Statement about ownership and other particulars about **Pashudhan Gyan Magazine** to be published in the first issue every year after the last day of February.

1.	Place of publication	:	Hisar (Haryana)
2.	Periodicity of its publication	:	Half Yearly
3.	Printer's Name	:	Dora Offset Printers
	Nationality	:	Indian
	Address	:	D. N. College Road, Behind Amar Jyoti Public School, Hisar
4.	Publisher's Name	:	Dr. S. R. Garg
	Nationality	:	Indian
	Address	:	Directorate of Extension Education, Lala Lajpat Rai University of Veterinary and Animal Sciences, Hisar-125004 (Haryana)
5.	Editor's Name	:	Dr. Davinder Singh
	Nationality	:	Indian
	Address	:	Directorate of Extension Education, Lala Lajpat Rai University of Veterinary and Animal Sciences, Hisar-125004 (Haryana)

6. Names and addresses of individuals who own the newspaper

LALA LAJPAT RAI PASHU CHIKITSA EVAM PASHU VIGYAN VISHV VIDHYALAY

I, Dr. S. R. Garg hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

(S. R. Garg)

किसान चालीसा

संतोश शर्मा (कोकिला)

इसका गुरू कर्म सै करै रात-दिन काम। महनत म्ह ही बीतै सै इनकी सुबह हर शाम।।
पढ़े लिखे भी करो सदा किसान नै प्रणाम। सबने नाज देवै सै, यो हलधर बलराम।।

जय किसान अन्न के तुम दाता। पाँव पकड़ के झुकाऊँ माथा।।
तेरी महनत तै सब खावै। अन्न धन सब तेरे तै पावै।।
भोर तै पहलै तू उठ जावै। खेत म्ह जाके पाणी लावै।।
महावीर तनै डर ना लागै। भूत भी तेरे तै डरते भाजै।।
हाथ म्ह कस्सी खुरपी ठाली। कदे ना बैठा तू ता ठाल्यी।।
कर्म अवतारा धरती पुतरा। काम करै तू जग म्ह सुथरा।।
अनपढ़ भी हर पढ़े लिखे हो। सारी हाण बस काम लगे हो।।
सारै देवता के मन बसिया। काम करण के ताम तो रसिया।।
सीधा बाणा सीधा खाणा। रोज टेम प्ह खेत म्ह जाणा।।
आलस तैरै धोरै नै आवै। भीत तलै को भाज्या जावै।।
छोटा हो या काम बड्डा हो। करणाए सै जै वो पड़ा हो।।
ना होवै तो नींद ना आवै। काम त्ह पहल्या घराँ ना जावै।
तेरी उपज दुनिया नै जिमावै। तू ना हो तो के जग खावै।।
सजीवनी बूटी तनै उपजाई, पेट भरण की असल दवाई।।
देवता भी तेरे गुण गावै। तेरा उपज्या भोग म्ह खावै।।
साधु संत नै देवै भिक्षा। तैरै कारण फैलै शिक्षा।।
तेरे जस नै के कोई गावै। इसे कवि ना जग म्ह पावै।।
पसुवा नै तू दैवै चारा। पशुधन लागै तनै तो प्यारा।।
करम का मंतर तनै पिछाणा। घर-घर म्ह तू भेजै दाणा।।
सारी हाण बहावै पसीना। कदे किसी का हक ना छिन्या।।
जेठ दुपहरी म्ह तू तपता। धूप छाम की बांट नै तकता।।
चुगे कपास भरी दुपहरी। पड़ै घामड़ा होरया बैरी।।
मीह झड़ की कदे करै नै परवा। करम ही तेरा सरवे सरवा।।
पोह का जाडा गांठ सी बांधै। खेत म्ह जाके डांगर हाकै।।
महनत ही भगवान सै त्हारा। जण-जण प्ह तेरा कर्जा भारया।।
घर म्ह तेरे एका भारी। मारे मंडासा संग म्ह नारी।।
काम म्ह तैरै हाथ बटावै। घर का करके खेत म्ह जावै।।
मन के सुथरे कती सौ भोले। आके लोग बणावै बौल्ये।।
आपस म्ह तामनै कटवावै। जात पात का भेद सिखावै।।
कुसंगत म्ह तू क्यूं आवै। अपणी धरती माँ नै डिगावै।।
नसा बुरा सै सुणलो भाई। दुखी सै बालक दुखी लुगाई।।
जणा-जणा तेरा करर्या सोसण। क्यूं कढ़वावै अपणा खोसण।।
तू तो सै भारत की शाण। अपनी ताकत नै तू पिछाण।।
लाडो तेरी करै पुकार। कोख म्ह मनै मत ना मार।।
मिटा बुराई का अभिशाप। पढ़ के करदे इसका जाप।।
बालक तेरे तनै बणाणे। उन्नत-कृषि पशुधन अपनाले।।
जय-जय-जय किसान मेहनती। धन्य धान्य हो तेरी खेती।।
तेरी मैहनत नै जो जाणे। वे तो सै संसार म्ह शाणे।।
जग के सो ताम पालनहारी। के समझै जिसकी मतमारी।।
ये चालीसा संतोष सुणावै। सारै किसाना नै सीस झुकावै।।
धरती सुत कती मैहनती। सीधा सादा रूप।
सारी हाण करम करै। यो भूमि का भूप।।

विस्तार शिक्षा गतिविधियाँ

पशु विज्ञान मेला , क्योड़क

विस्तार शिक्षा निदेशालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार - 125 004 (हरियाणा)